चन्दामामा
अक्तूबर १९७४
1 रु

Photo by: MIKE BROWN

IN A PRIVATE SANCTUARY IN AUSTRAL

Children of 12 years and over can themselves operate their Savings Bank Accounts.

चिक्लेट्स 'हंसो और चखो' प्रतियोगिता में भाग लो

पहले प्राप्त होनेवाले सही प्रवेशपत्रों के लिए ५०० से भी अधिक इनाम!

नया चिक्लेट्स 'हंसो और चखो' पैक ख़रीदो. प्रत्येक पैक के पीछे एक हंसानेवाला मज़ेदार चित्र है. ऐसा कि तुम चिक्लेट्स चखोगे और हंस पड़ोगे या फिर हंसते-हंसते चिक्लेट्स चखते रहोगे और इन्हें काट कर रख लोगे. इस प्रकार के ३० चित्र हैं

३० चित्रों को काट लो.

WH 7464

'हंसो और चखो' प्रतियोगिता में भाग लेने का तरीक़ा.

इसमें ३० अलग अलग 'हंसो और चखो' चित्र हैं. इन सभी ३० चित्रों को काट कर अपना नाम और पता लिखकर इस पते पर भेजो : वार्नर हिन्दुस्तान लिमिटेड, पो. ऑ. बॉक्स नं. ९११६, बम्बई ४०० ०२५. पहले प्राप्त होनेवाले ३ सही प्रवेशपत्रों पर प्रत्येक को एक शानदार ट्रांज़िस्टर इनाम में मिलेगा. बाद के ५०० प्रवेशपत्रों पर प्रत्येक को चिपकानेवाला रंगीन चित्र (स्टिकर्स) मिलेगा. अब झटपट प्रवेशपत्र भरने की तैयारी करो.

एक बात और. चित्र में दिखाए गए १२ व्यक्तियों के नाम नहीं दिये गए हैं. उदाहरण के लिए क्या तुम बता सकते हो कि जोसेफ़िन के पास नहीं रहने पर जो व्यक्ति चिक्लेट्स चख रहा है, वह कौन है? अगर तुम नहीं जानते तो अपने दोस्तों से पूछ देखो. चिक्लेट्स 'हंसो और चखो' पैक में तुम्हारे लिए यह एक और नया मज़ा है.

१ ला इनाम

२ रा इनाम

३ रा इनाम

याद रखो, अगर तुम्हें अपने 'हंसो और चखो' पैक में इनामी पीला चिक्लेट्स मिले तो अपने दुकानदार से एक और पैक प्राप्त करो. मुफ़्त.

चन्दामामा

संस्थापक : नागिरेड्डी
संचालक : 'चक्रपाणी'

इस महीने की बेताल कथा 'पर्दे का रहस्य' सूझ-बूझ का सुंदर उदाहरण है।

इस अंक के साथ 'महाभारत' धारावाही समाप्त होता है। अगले महिने से "वीर हनुमान" नाम से हनुमान की विचित्र कथा रंगीन धारावाही प्रारंभ होती है। पुराण प्रसिद्ध पात्रों में हनुमान की अपनी विशिष्टता है। उसके चरित्र में कहीं हमें कलंक दिखाई नहीं देता। उसकी शक्ति एवं सामर्थ्य अद्‌भुत हैं। हनुमान के चरित्र में कहीं पराजय दिखाई नहीं देती।

वर्ष : २७ अक्तूबर १९७४ अंक : ४

मित्र-भेद

[१५]

दमनक के मुँह से कुकुद्रुम की कहानी सुनकर पिंगलक ने पूछा--"संजीवक ने मेरे साथ द्रोह करने का विचार किया हो तो यह कैसे साबित हो जायगा?"

"यदि वह अपने सींग आगे बढ़ा कर आपकी सेवा में आवे तो समझ लीजिए कि सींग मारकर आपका वध करने आ रहा है।" दमनक ने समझाया।

इसके बाद दमनक सिंह से विदा लेकर चिंता का अभिनय करते संजीवक के पास चला गया। "भाई, तुम चिंतित क्यों हो?" संजीवक ने दमनक से पूछा।

"राजा के आश्रय में जाते हैं तो चिंता के अतिरिक्त हाथ और क्या लगती है? राज सेवक के सिर पर सदा अपने तथा अपने मित्रों के प्राणों को लेकर चिंता सवार रहती है! गरीब, रोगी, देश से निकाला हुआ व्यक्ति, मूर्ख और राज सेवक, जीवित रहते हुए मृत व्यक्तियों के समान हैं। उन्हें स्वतंत्रता नहीं है। कुत्तों को भी स्वेच्छा प्राप्त है, पर उन्हें नहीं। राज सेवक को यति की भांति जीवन यापन करना होगा। हे मित्र! लगता है कि अब तक तुमने यह बात नहीं समझी!" दमनक ने कहा।

"क्या राजा के निकट मित्र बने रहने पर मेरे प्राणों को खतरा है?" संजीवक ने विकल होकर पूछा।

"मेरा तो यही विचार है! तुम मेरे परम मित्र हो, इसलिए मैं सच्ची बात बिना छिपाये कह देता हूँ। हमारे मालिक पिंगलक न मालूम क्यों, तुम पर नाराज़ हैं। आज उन्होंने मुझ से स्वयं बताया

है–'संजीवक का वध करके सबको दावत दूंगा।' यह खबर सुनते ही मेरा हृदय दुख से भर उठा। इस कठिन स्थिति का सामना करने के लिए तुमको तैयार रहना चाहिए।" दमनक ने कहा।

यह बात सुनने पर संजीवक को लगा, मानो उसके सिर पर गाज गिर गई हो।

"उफ! मुझ पर यह संकट क्यों आ पड़ा है? मैंने विश्वासपूर्वक राजा की सेवा की! उसी का यह फल है? यदि शत्रुता का कारण मालूम हो जाय तो मैं उसे सुधार सकता हूँ। मगर अकारण वैर को कैसे सुधार लूं? मैंने पिंगलक के साथ कौन-सा अपराध या द्रोह किया है?" संजीवक ने कहा।

"मित्र! राजाओं का दिमाग ही कुछ ऐसा होता है! वे बलवान पर ही प्रहार करते हैं।" दमनक ने कहा।

"हां, हां, तुम सच कहते हो! दोष तो मेरा ही है। मैं दूसरों पर झट विश्वास कर बैठता हूँ। मुझ जैसे शाकाहारी को मांस खानेवाले सिंह के साथ कभी मित्रता नहीं करनी चाहिए थी। पुराने जमाने में जैसे हंस की भांति अपने स्तर से कम लोगों के साथ दोस्ती करनेवाले नाश को प्राप्त हो जाते हैं।" यों संजीवक ने हंस की कहानी सुनाई।

हंस और उल्लू की कहानी

एक जंगल में एक सरोवर था। उसमें एक हंस अकेले निवास करते, तैरते, आहार

लेते सुखपूर्वक अपने दिन बिताया करता था। एक दिन उस प्रदेश में एक उल्लू आ पहुँचा।

"तुम कहाँ के निवासी हो? यहाँ पर क्यों आये हो?" हंस ने उल्लू से पूछा।

"मैं ऐसे ही एक और सरोवर के बाजू में स्थित कमलों के वन में रहता हूँ। मैं तुम्हारी मित्रता करके अपने पापों को दूर करने यहाँ आया हूँ।" उल्लू ने कहा।

उल्लू की बातें सुनकर हंस फूला न समाया और बोला–"अच्छी बात है! तुम यहाँ पर मजे से रह सकते हो?" उल्लू हंस के साथ रहने लगा।

दोनों ने बहुत दिन सुख पूर्वक बिताये। एक दिन उल्लू अपने प्रदेश को लौटते हुए बोला–"यदि तुम मेरे प्रति सच्चा स्नेहभाव रखते हो तो मेरे यहाँ आ जाओ और थोड़े दिन मेरे अतिथि बनकर रहो।"

हंस एक दिन कमलों के वन में चला गया। मगर उल्लू एक पहाड़ी गुफा में सो रहा था।

"मैं तुम्हारा मित्र हंस हूँ। तुमको देखने के लिए आया हूँ।" हंस ने कहा।

"मुझे तो दिन में आँखें दिखाई नहीं देतीं। अंधेरा होने पर हम दोनों मिलेंगे।" उल्लू ने कहा।

हंस अंधेरा फैलने तक इनजार करता रहा। तब उल्लू बाहर आया और उसने हंस के बारे में कुशल प्रश्न पूछे। इसके बाद हंस गुफा के बाहर सो गया।

एक व्यापारी दल ने उस सरोवर के निकट उस रात को पड़ाव डाला। मुँह अंधेरे व्यापारी दल ने यात्रा की तैयारियाँ करके शंख बजाया। शंख की ध्वनि सुनकर उल्लू चौंक पड़ा। वह जोर से चिल्ला कर गुफा के भीतर चला गया। हंस गुफा के बाहर ही रह गया।

यात्रा के समय उल्लू का बोलना अपशकुन मान कर व्यापारी दल के नेता ने अपने अनुचर को आदेश दिया कि उल्लू पर निशाना साधकर उसे मार डाले। तीरंदाज ने वैसे ही बाण छोड़ा। बाण हंस को जा लगा और वह वहीं पर मर गया।

विचित्र जुड़वाँ

[२]

[महाराज दानशील एक दिन उद्यान में टहल रहा था, उसे एक चट्टान दिखाई दी। उसे हटा कर देखा, उसके भीतर भूगर्भ गृह था। राजा ने अपनी तीनों पुत्रियों को नौकरों की देख-रेख में भूगर्भ गृह में रखा और रोते हुए राजमहल को लौटा। इसे देख रानी डर के मारे बेहोश हो गई। बाद–]

राजमहल के परिचारक राजा को सांत्वना देने लगे। परिचारिकाओं ने रानी का उपचार करना शुरू किया। वहाँ पर उपस्थित सभी लोगों के चेहरे मुरझाये हुए थे। इस बीच दरबारी वैद्य ने आकर रानी को दवा दी, थोड़ी ही देर में रानी होश में आई। तब जाकर राजा का मन शांत हुआ। वैद्य के पूछने पर राजा ने कारण यों बताया–

"मैं रोज़ की भांति दासियों के साथ राजकुमारियों को लेकर उद्यान में टहलने गया। इन चार सालों के भीतर राजकुमारियाँ कई खतरों का सामना कर बच निकली हैं। इन सभी घटनाओं को मैंने अपनी आँखों से देखा था, इसलिए मैं हमेशा सतर्क रहता था। इसलिए जब भी राजकुमारियाँ महल से बाहर जातीं, मैं भी एक सौ सेवकों को साथ लेकर उनके

साथ जाया करता था। इसी प्रकार आज भी मैंने उद्यान में राजकुमारियों के चारों तरफ़ सौ सेवकों को पहरे पर नियत किया और उनके बीच में और दासियाँ भी राजकुमारियों पर निगरानी किये हुए थे। इतने में हमारे देखते-देखते एक भयंकर वात्याचक्र उठा, अचानक चारों तरफ़ धूल उठी। हमने इस विचार से पल भर के लिए आँखें मूँद लीं कि धूल हमारी आँखों में पड़ न जाय। फिर थोड़ी देर बाद आँखें खोलने पर देखते क्या हैं, तीन गीध आकर राजकुमारियों को उठा ले जा रहे हैं।" यों राजा कुछ और सुना रहा था, तभी रानी विकल हो 'ओह!' चिल्लाते बेहोश हो गिर पड़ी।

परिचारिकाएँ रानी का उपचार करने लगीं। थोड़ी देर बाद रानी होश में आ गई। तब राजा ने फिर कहना शुरू किया–"यह सारी घटना पल भर में हो गई। तब गीध जिस दिशा में उड़कर जा रहे थे, उस दिशा में मैं, सौ सेवक और दासियाँ भी दौड़ गयीं। मुझे तो पैदल चलने की आदत न थी, इसलिए मैं सब से पीछे रह गया। लेकिन नौकरों ने तेजी के साथ गीधों का पीछा किया। मगर थोड़ी देर बाद गीध हमारी आँखों से ओझल हो गये। इस पर सेवक सब निराश हो लौट पड़े। इसे देख मैं एक क़दम भी आगे बढ़ा न पाया।

"उस वक़्त एक और विचित्र घटना हुई। लौटनेवाले मेरे सौ सेवक और तीन दासियाँ–मेरे देखते-देखते थोड़ी दूर और लौटकर अचानक पक्षियों के रूप में बदल गये और वे भी उस दिशा में उड़ गये जिस दिशा में गीध उड़ गये थे। इस घटना को देखने पर मेरा मन विकल हो गया। मुझे लगा कि भगवान ने मुझे इस प्रकार की और कितनी घटनाओं को देखने के लिए जिंदा रखा है।" राजा अपने वचन समाप्त कर विलाप करने लगा।

इस बीच यह समाचार जानकर ज्योतिषी भी राजमहल में दौड़ा-दौड़ा आया। ज्योतिषी को देखते ही रानी उसके चरणों पर गिरकर बोली—"आपने बच्चों के बारे में बहुत ही सावधान रहने को बताया था, फिर भी हम उन्हें बचा नहीं पाये; हालांकि हमने अपनी तरफ़ से पूरी कोशिश की। मेरी प्यारी बच्चियाँ मेरी आँखों के सामने न रहीं। आप कृपया एक बात बिना छुपाये बताइए, कम से कम वे ज़िंदा हैं या नहीं? इस बात को जाने बिना मैं जीवित नहीं रह सकती।" यों कहते रानी रो पड़ी।

ज्योतिषी ने फिर एक बार उन बालिकाओं की जन्म-कुंडलियाँ मंगवायी; इतमीनान से उन्हें पढ़कर यों बताया—"महारानी जी! जन्म कुंडलियों के मुताबिक़ इस वर्ष बच्चों को किसी प्रकार का ख़तरा दिखाई नहीं देता। परंतु यह घटना कैसे घटी, मेरी समझ में नहीं आता। लेकिन वे तीनों किसी जगह सुरक्षित हैं। केवल राजकुमारियाँ ही नहीं बल्कि उनके साथ गये हुए सौ सेवक और दासियाँ भी सुरक्षित हैं। इन तीन वर्षों के भीतर वे कभी न कभी फिर से हम लोगों के बीच आने के लक्षण दिखाई दे रहे हैं। इसलिए आपको चिंता करने की कोई ज़रूरत नहीं सिवाय भगवान पर भरोसा रखकर उस दिन की प्रतीक्षा किये बिना हम कुछ नहीं कर सकते।" यों ज्योतिषी ने रानी को हिम्मत बंधाई।

वहाँ पर उपस्थित लोगों में कोई यह समझ न पाया कि थोड़ी देर पहले राजा का ज़ोर से चिल्लाते एवं रोते हुए वहाँ पर पहुँचना तथा रानी को कल्पित कथाएँ सुनाना और उसे समझाना, ये सब राजा के द्वारा बनाई गई योजनाएँ हैं। राजा ने पहले यह सोचकर यह नाटक रचा कि अपनी तीन पुत्रियों, सौ सेवकों तथा तीन दासियों के अचानक गायब हो जाने के संबंध में रानी पूछ बैठेगी तो क्या उत्तर दिया जाय! इसी के लिए राजा ने यह योजना बनाई थी।

यदि भूगर्भ के गृह में छिपाने की बात प्रकट की जाय तो राजा को इस बात का डर सताने लगा कि कहीं यह बात अपनी पुत्रियों की जान को खतरे में डालनेवाले दुष्ट ग्रह के कान में पड़ न जाय! चाहे जो हो, मुद्दत के बाद पैदा हुई अपनी प्यारी पुत्रियों को बचाने के लिए राजा ने बड़ी खूबी के साथ, किसी के मन में संदेह न पैदा करनेवाली यह योजना बनाई।

राजा ने इस प्रकार जो कपट नाटक रचा, रानी ने उस पर विश्वास किया। राज कर्मचारी तथा अन्य लोगों ने भी विश्वास किया। मगर ज्योतिषी के मुँह से यह जानकर रानी का मन थोड़ा आश्वस्त हुआ कि राजकुमारियाँ कहीं प्राणों के साथ सुरक्षित हैं। जहाँ कहीं भी सही, उसकी संतान सुरक्षित हो, यह उसके लिए बड़ी बात थी! इसके बाद राजा को इस बात के लिए रानी सताने लगी कि तुरंत सेवकों को राज्य के चतुर्दिक भेजकर राजकुमारियों की खोज करके उन्हें लिवा लावे! राजा तो जानता था कि राजकुमारियाँ भूगर्भ के गृह में सुरक्षित हैं, फिर भी रानी की इच्छा के अनुसार उसको संतुष्ट करने के लिए राजा ने सेवकों को देश के कोने कोने में भेज दिया।

तत्काल ही राजा के सेवक घोड़ों पर राजकुमारियों की खोज में चल पड़े। लेकिन राजकुमारियाँ सेवकों को दीखनेवाले

प्रदेश में हों, तब न उन्हें राजकुमारियों का पता चलता! वे तो भूगर्भ के गृह में सुरक्षित थीं। इसलिए सेवक एक-एक करके मुंह लटकाये लौट आये और कहने लगे कि राजकुमारियों का कहीं पता न चला।

दिन बीतते गये। रानी के मन में अपनी पुत्रियों की चिंता बढ़ती गई। राजा ने बड़ी होशियारी से यह नाटक रचा और इस बात का पूरा इंतज़ाम किया कि राजकुमारियों का पता किसी भी हालत में किसी को न लगे। मगर वह भी प्रकट रूप में इस बात का अभिनय करने लगा कि वह भी स्वयं अपनी पुत्रियों को लेकर बहुत ही दुखी हो!

इस बीच राजा प्रति दिन सब की आँख बचाकर भूगर्भ-गृह में आता-जाता रहा। यह देख वह निश्चिंत रहा कि तीनों राजकुमारियाँ सेवकों की देखरेख में पल रही हैं। इस प्रकार एक सप्ताह बीत गया। इस बीच राजा के मन में एक और चिंता सताने लगी। वह यह कि वह प्रति दिन भूगर्भ-गृह में जाकर अपनी पुत्रियों को देख आने पर ही निश्चिंत रह सकता था, अन्यथा उसका मन विकल रहता था। लेकिन सब की आँख बचाकर इस प्रकार प्रति दिन चोरी से भूगर्भ-गृह में आना-जाना भी बहुत ही कठिन है। कभी न कभी उसके आते-जाते कोई न कोई देख लेगा। यह बात धीरे धीरे सब पर प्रकट हो जाएगी और वह जिस दुष्ट ग्रह से डरता है, उसे भी मालूम हो सकता है। बालिकाओं का पता लग गया तो वह ग्रह किसी न किसी रूप में उन्हें निगल डालेगा। इसलिए क्या किया जाय, यही चिंता राजा के मन को खुरेदने लगी। वह रात-दिन सोचता रहा, मगर उसे कोई उपाय न सूझा। इसी उधेड़बुन में चार दिन और बीत गये।

एक दिन राजा शाम को भूगर्भ में स्थित राजकुमारियों को देख लौटा था।

राजकुमारियाँ सुरक्षित थीं। इसलिए राजा अपने शयन-कक्ष में निश्चिंत सो रहा था। आधी रात के वक़्त किसी के द्वारा उसे जगाने की आहट हुई। राजा ने आखें खोलकर देखा। वह अपनी आँखों पर खुद विश्वास नहीं कर पाया। क्यों कि वहाँ पर और कोई न आया था, उसकी लाड़ली बेटी सुहासिनी आई थी! अचानक अर्द्ध रात्रि के वक़्त अपनी पुत्री को अपने शयन कक्ष में देख राजा दंग रह गया। उसके मुँह से बोल तक न फूटे।

थोड़ी देर तक राजा यही सोचता रहा कि वह कोई सपना देख रहा है। मगर सुहासिनी बिस्तर पर आकर अपने पिता की छाती पर बैठे बाल-चेष्टाएँ करते पुकार रही थी—"पिताजी! पिताजी!" तब जाकर राजा इस निश्चय पर पहुँचा कि वह सपना नहीं देख रहा है, वह यथार्थ है! अपनी आँखों के समक्ष अपनी प्यारी बेटी सुहासिनी को खेलते देख वह उसे सपना कैसे मान सकता है! तुतली बोली में अपने को पुकारते स्पष्ट सुनाई दे रहा है, ऐसी हालत में उसको सपना कैसे समझे! राजा झट उठ बैठा। सुहासिनी को अपने हृदय से लगाते बोला—"बेटी, यह क्या? इस आधी रात के वक़्त तुम यहाँ पर कैसे आ गयी? हमारी दासियाँ कहाँ? नौकर सब क्या हो गये हैं? उन सबको छोड़ तुम अकेली यहाँ पर कैसे आ गई हो? यह सब मुझे बड़ा ही विचित्र मालूम होता है! बताओ, जल्दी बताओ, आखिर क्या हो गया है?" यह कहते एक ओर विस्मय के साथ और दूसरी ओर बड़ी आतुरता से प्रश्नों की वर्षा करने लगा।

सुहासिनी थोड़ी देर तक कोई जवाब न दे पाई। मगर उसने अपने पिता का हाथ पकड़ कर उसे संकेत किया कि वह चारपाई से उतरे। इसके बाद उस कमरे में स्थित एक लंबी तस्वीर के पास अपने पिता को ले गई और पूछा—"पिताजी! उस तस्वीर को देखते हो न?" परंतु राजा की

समझ में कुछ न आया कि वह क्या कहना चाहती है और क्या कहने जा रही है।

"तुम यहाँ तक कैसे आ गई हो? जवाब दो! तुम तस्वीर क्या दिखाती हो? क्या तुम वह तस्वीर चाहती हो? वैसी तस्वीरें नहीं, उससे भी बढ़िया तस्वीरें कई दूँगा। पहले तुम यह बताओ कि यहाँ पर कैसे आ गई हो?" यों राजा बराबर पूछता रहा।

इस पर सुहासिनी ने भोले स्वर में जवाब दिया–"हाँ, पिताजी! उसी तस्वीर में से आ गई!"

तस्वीर से कैसे आ गई होगी? यही सोचते ;राजा ने तस्वीर को हटा कर देखा। उस दृश्य को देख राजा चकित रह गया और जड़वत खड़ा रहा! क्यों कि तस्वीर के नीचे दीवार में एक बहुत बड़ा द्वार दिखाई दिया। राजा थोड़ी देर में अपने को संभाल कर राजकुमारी को साथ ले उस द्वार में से भीतर चला गया। थोड़ी दूर जाने पर राजा ने जान लिया कि वह कोई सुरंग है। इसलिए राजकुमारी को हाथों में उठा कर धीरे से क़दम बढ़ाते आगे बढ़ा।

सुरंग में आधी दूर जाने पर सुहासिनी को पालनेवाली दासी सामने आई। सुहासिनी जब गायब हुई, तब वह दासी कमरे में सो रही थी। लेकिन कुछ ही क्षणों में वह जाग उठी। उसने चौंक कर देखा कि बिस्तर पर सुहासिनी नहीं है,

साथ ही दीवार में पहले जहाँ आईना था, वहाँ पर एक द्वार को देख दासी एक दम डर गई ।

इस पर दासी राजकुमारी की खोज करते अप्रयत्न ही उस सुरंग में आ गई । मगर सुहासिनी को लेकर राजा के लौटते देख उसकी जान में जान आ गई । तीनों मिलकर जब सुरंग के अंतिम छोर पर पहुँचे, तब देखते क्या हैं, वहाँ से सुहासिनी के कमरे में जानेवाला द्वार नहीं है । तब राजा और दासी भी घबरा गये । उन्हें इस बात का संदेह भी हुआ कि कहीं सुरंग में असली मार्ग से भटक तो नहीं गये हैं ।

राजा ने सुहासिनी तथा दासी को वहीं पर ठहरने का आदेश दिया और वह स्वयं सुरंग के अंतिम छोर तक गया । बहुत दूर जाने पर उसे सुरंग का एक ही मार्ग दिखाई दिया, दो मार्ग दिखाई नहीं दिये । सुरंग आख़िर राजा के कमरें में जा समाप्त हुआ । इस पर राजा अब और डरने लगा । राजा सोच में पड़ गया और आखिर उस जगह पहुँचा जहाँ पर राजा दासी और सुहासिनी को छोड़ गया था । लेकिन इस बार उसे और आश्चर्य हुआ!

वह सुरंग राजा को भूल भुलैया जैसा प्रतीत होने लगा । अभी अभी तो वह उस सुरंग को स्पस्ट देख गया था, और जिस सुरंग से वह गया था, उसी में से लौट आया, पर यह क्या? जादू तो नहीं? वह पछताने लगा । साथ ही वह यह भी चिंता करने लगा—तीन साल तक बच्चियों को सुरक्षित रखने का स्थान देख जहाँ वह निश्चित था, अब दूसरी चिंता फिर सवार हो गयी ।

कुछ ही मिनटों के भीतर राजा ने लौट कर देखा दासी और सुहासिनी को जहाँ छोड़ गया था, वहाँ पर वे दोनों नहीं हैं । इसे देख राजा को लगा कि वह पागल होता जा रहा है । उसे कुछ न सूझा, वह पागल की भांति उस सुरंग में इधर-उधर टहलने लगा । (और है)

पर्दे का रहस्य

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया। पेड़ से शव उतार कर कंधे पर डाल सदा की भांति श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा– "राजन, तुम्हें यह कोई परीक्षा सी लगती है। इस परीक्षा में तुम्हारे सफल होने मात्र से तुम्हें फल हाथ लगनेवाला नहीं है। इसके उदाहरण स्वरूप में तुम्हें नारायण भट्ट की कहानी सुनाता हूँ। श्रम को भुलाने के लिए सुनो।"

बेताल यों कहने लगा: प्राचीनकाल में काश्मीर देश में नारायण भट्ट नामक एक पंडित था। वह समस्त शास्त्रों में निपुण एवं मेधावी था। उसके मन में सारे देश में भ्रमण करने तथा समस्त पंडितों को हराने की कामना पैदा हुई।

अपनी इस कामना की पूर्ति के लिए नारायण भट्ट ने देशाटन करना शुरू किया

बेताल कथाएँ

और प्रत्येक देश के प्रसिद्ध पंडितों के साथ शास्त्रार्थ करके उन्हें हराया। पुरस्कार प्राप्त कर बहुत दिन बाद कलिंग देश को लौट आया।
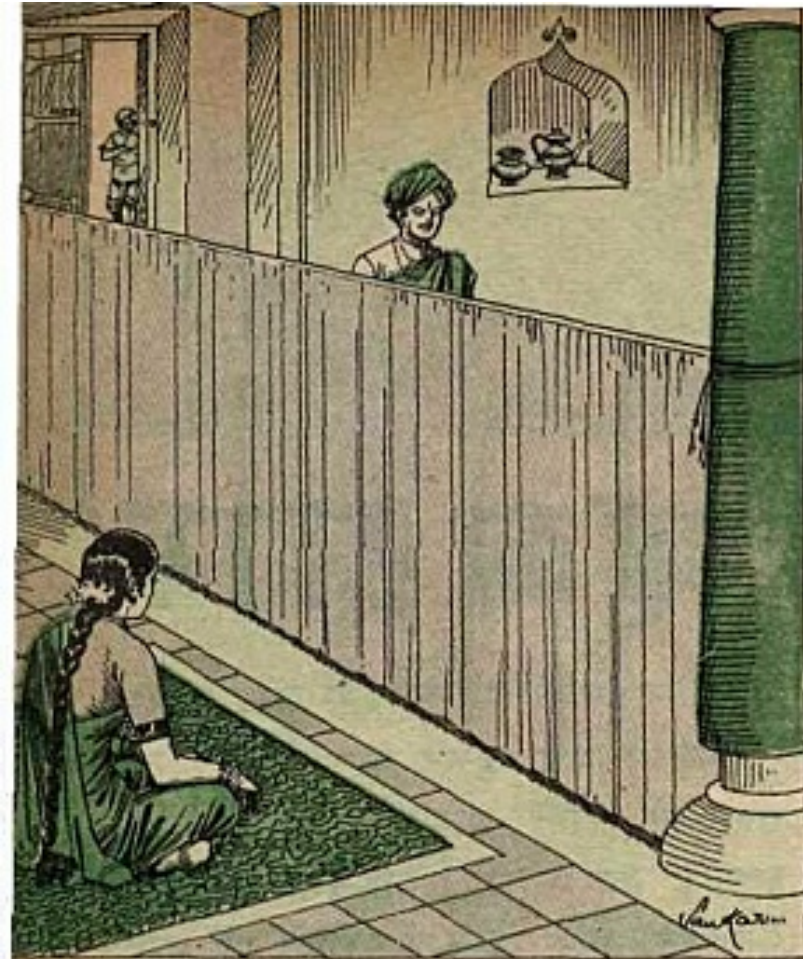
कलिंग देश के एक अग्रहार में कमलामणि नामक एक विदुषीमणि थी। वह भी समस्त शास्त्रों की ज्ञात्री थी। उसने एक घोषणा कराई थी कि जो पंडित उसके साथ शास्त्रार्थ करके उसे हराएगा, उसके साथ वह शादी करेगी, यदि उसके हाथों में हार जाएगा तो उस पंडित का कर्तव्य होगा कि उस विदुषी के चरणों में प्रणाम करके लौट जाय! अनेक युवा पंडितों ने कमलामणि के साथ शास्त्रार्थ किया और हारकर उसके चरणों में प्रणाम करके वापस चले गये।

कलिंग देश में पहुँचते ही नारायण भट्ट ने कमलामणि के बारे में सुना। वह कमलामणि के अग्रहार में पहुँचा और उस गाँव के छोर पर रहनेवाले एक ब्राह्मण के यहाँ अतिथि बनकर रहा।

नारायण भट्ट तालाब में गया। नहा कर लौट आया। भोजन करते समय उसने कमलामणि के बारे में उस गृहस्थ से पूछा। गृहस्थ ने समझाया कि उसने कमलामणि को उसकी छोटी अवस्था में देखा है, परंतु युक्त वयस्का होने के बाद उसको देखने का कभी मौक़ा नहीं मिला है। यह भी सुना है कि उसके साथ शास्त्रार्थ करने आनेवालों के सामने भी वह नहीं आती, बल्कि पर्दे के पीछे रहकर तर्क का जवाब देती है, लेकिन वह एक अच्छी विदुषी है।

भोजन के बाद नारायण भट्ट कमलामणि के घर पहुँचा और कहला भेजा कि वह कमलामणि के साथ शास्त्रार्थ करने आया हुआ है। यह बात सुनते ही कमलामणि ने एक कमरे में पर्दा बंधवाया। एक ओर वह बैठी और दूसरी ओर नारायण भट्ट के लिए उचित आसन लगवाया। तब भट्ट को कमरे के भीतर बुला भेजा।

भट्ट के बैठ जाने पर कमलामणि ने पूछा—"आपने शायद मेरी प्रतिज्ञा के बारे में सुना होगा?"

"आप ही बताइए।" भट्ट ने पूछा।

"यदि आप हार गये तो आपको मेरे चरणों में प्रणाम करना होगा, यदि मैं हार गयी तो आपको मेरे साथ विवाह करना होगा। आप मेरी इन शर्तों को स्वीकार करते हैं तो आप मेरे साथ शास्त्रार्थ कीजिए, वरना नहीं।" कमलामणि ने अपनी शर्तें स्पष्ट कीं।

"यदि मैं हार गया तो आपके चरणों में प्रणाम करूँगा, परंतु अगर आप हार गयीं तो आपके साथ विवाह करने की बात मैं सोचूंगा।" नारायण भट्ट ने उत्तर दिया।

कमलामणि ने पल भर सोचकर कहा—"अच्छी बात है, ऐसा ही होगा।"

इसके बाद दोनों के बीच बड़ी देर तक अनेक विषयों पर चर्चा चली। दोनों समान रूप से प्रतिभा रखनेवाले थे। अत: एक के प्रश्नों का उत्तर दूसरे ने सही ढंग से किया। नारायण भट्ट अंत में यह सोचकर डरता रहा कि वह आखिर एक औरत के हाथों में हार जाएगा! उसने जो जटिल प्रश्न पूछे, उन सब का कमलामणि ने बड़ी सरलता के साथ उत्तर दिया।
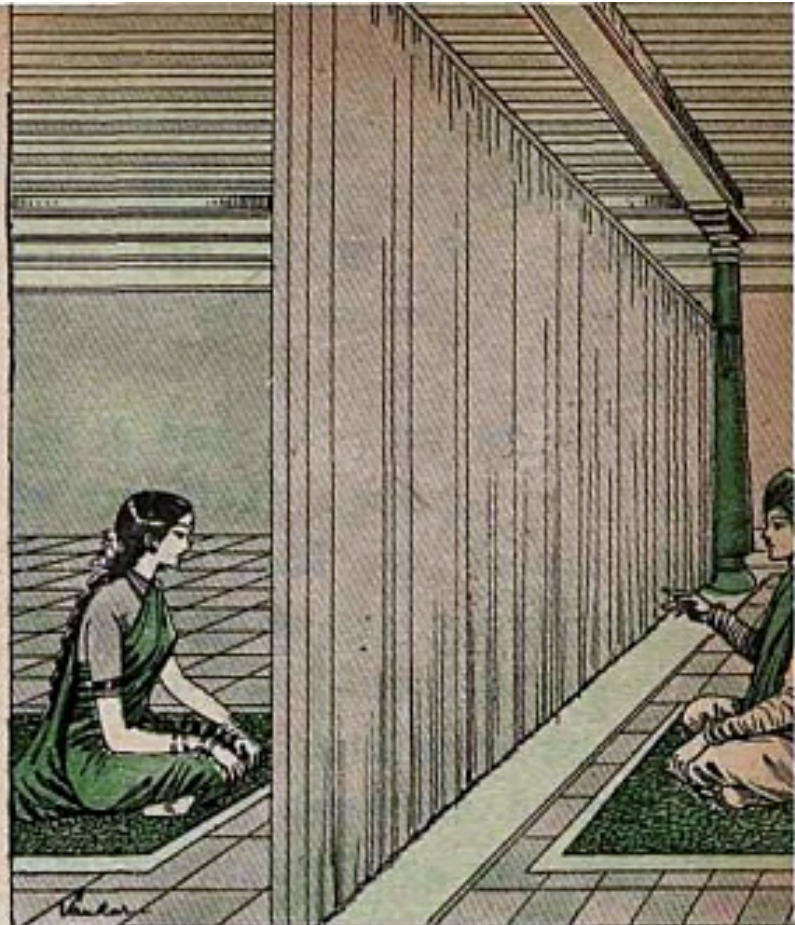
थोड़ी देर बाद नारायण भट्ट ने कमलामणि से पूछा—"आपने किसके यहाँ विद्या प्राप्त की?"

"मैंने अपने पिता के यहाँ ही विद्या पायी है।" कमलामणि ने जवाब दिया।

"आपकी उम्र कितनी है?" नारायण भट्ट ने फिर पूछा।

"बाईस वर्ष की है।" कमलामणि ने उत्तर दिया।

"तो आपका इस प्रकार पर्दा करके दूसरों के देखने से बचने का कारण क्या है?" नारायण भट्ट ने पूछा।

"यह मेरा नियम है। इस नियम को मानने में आपको आपत्ति क्या है?" युवती ने कहा।

नारायण भट्ट थोड़ी देर तक सोचता रहा, तब एक ताड़पत्र पर कोई श्लोक लिख कर उसे पर्दे के पीछे फेंकते हुए बोला–"आप इस श्लोक का भाव समझाइए।"

कमलामणि ताड़पत्र को देखते ही फूट-फूट कर रो पड़ी और बोली–"मैं हार गई हूँ। आप मेरे साथ विवाह कीजिए।"

नारायण भट्ट अपने आसन पर से उठ खड़ा हुआ, तब बोला–"यह असंभव है।" इसके बाद वहाँ से चला गया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा–"राजन, अपने बराबर पांडित्य रखनेवाली एक नारी ने जब अपनी हार स्वीकार की, तब प्रसन्न हुए बिना नारायण भट्ट क्यों चला गया? इसका समाधान जानते हुए भी न दोगे तो तुम्हारा सिर टुकड़े टुकड़े हो जाएगा।"

इस पर विक्रमार्क ने यों उत्तर दिया–"नारायण भट्ट ने कमलामणि के रहस्य को जान लिया, मगर उसको नहीं हराया। वह युवती स्पष्ट रूप से अंधी है। जटिल प्रश्नों का उत्तर देनेवाली वह युवती एक श्लोक को पढ़कर उसका अर्थ समझाने का अनुरोध करने पर अपनी हार स्वीकार करती है तो यह बात स्पष्ट मालूम हो जाती है कि वह अंधी है। यह बात स्पष्ट करने के लिए ही नारायण भट्ट ने कमलामणि से उसके शिक्षक तथा अवस्था के बारे में प्रश्न पूछे।

"कमलामणि का गुरु उसका पिता ही था। इसलिए यह बात गुप्त रह गई कि वह अंधी है। उसकी शिक्षा के समाप्त हुए भी ज्यादा समय न हुआ होगा। नारायण भट्ट के मन में अंधी युवती के साथ विवाह करने की इच्छा न होगी, अथवा उसके मन में यह विश्वास जमा न होगा कि वह उस युवती को हरा सका है। इसीलिए वह चुपचाप वहाँ से चला गया होगा।"

इस प्रकार राजा के मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)
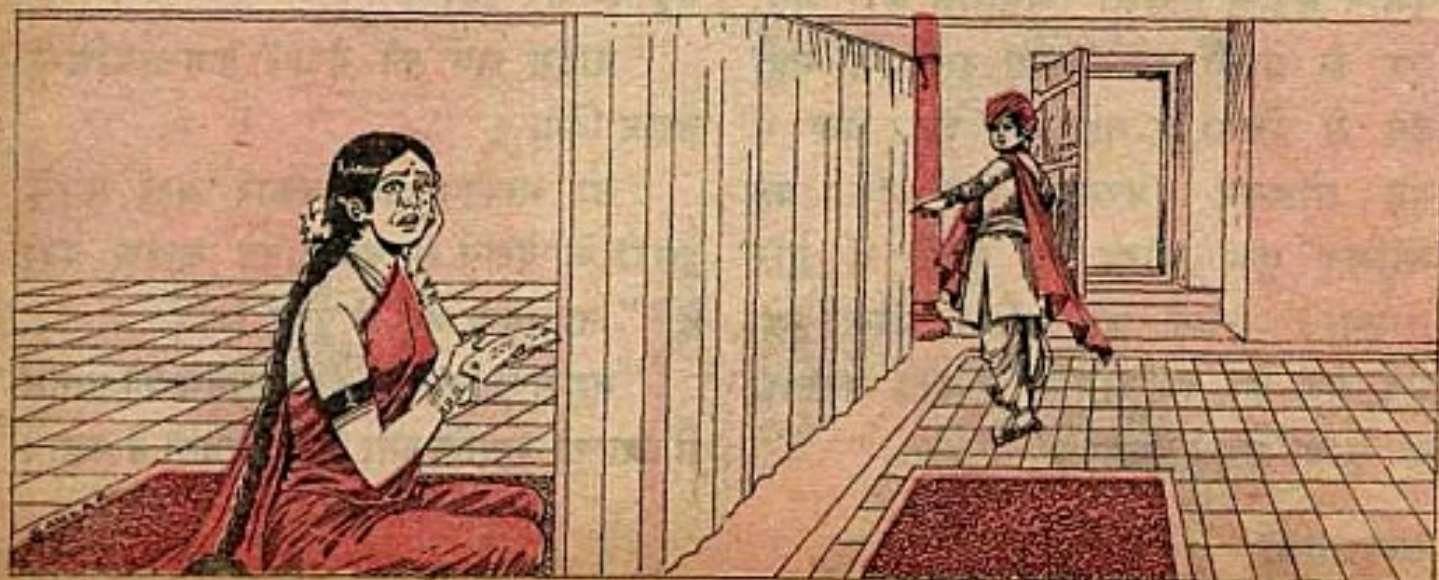
जादू की शादी

समतट देश के राजा साम्य की इकलौती पुत्री श्रावस्ती थी। एक दिन श्रावस्ती अपनी सहेलियों के साथ तप्तिका नदी में स्नान कर रही थी। उस वक़्त मालागढ़ का युवराज माल्य तथा अवंतिका नगर का युवराज अवंत अपने घोड़ों पर नदी के किनारे से आ निकले।

श्रावस्ती अनुपम सुंदरी थी। उसके सौंदर्य पर दोनों युवराज मोहित हो उठे और उनके मन में श्रावस्ती के साथ विवाह करने की प्रबल इच्छा पैदा हुई। युवराजाओं ने श्रावस्ती की सखियों के द्वारा जान लिया कि वह युवती समतट देश की राजकुमारी है।

यह घटना देख श्रावस्ती घबरा गई और तुरंत पालकी पर सवार हो अपनी सखियों के साथ नगर में चली गयी, तब दोनों युवराज उसके पीछे चल पड़े।

मालागढ़ का राज्य समतट देश की पश्चिमी सीमा के पार था। उसका राजा मालव्य अत्यंत क्रूर एवं युद्ध प्रिय था। उसका पुत्र माल्य भी अपने पिता ही के समान क्रूर और अहंकारी था। उसने अपनी पहली पत्नी को विवाह के दूसरे ही दिन छुरी भोंक कर मार डाला था। कारण तत्काल उस युवती ने उसके आदेश का पालन न किया था। इसलिए वह युवराज अब दूसरी पत्नी की खोज में था। पर पिता और पुत्र दोनों शिवजी के बड़े भक्त थे।

अवंतिका राज्य समतट के उत्तर में है। उसका राजा अवनीश अत्यंत बलवान है, फिर भी वह दयालू और सज्जन पुरुष है। उसका पुत्र अवंत भी सभी बातों में अपने पिता के समान था। उसका अभी तक विवाह न हुआ था।

राजकुमारों के नगर में प्रवेश करने का समाचार सुनते ही श्रावस्ती के पिता ने उन दोनों का अतिथि-सत्कार किया।

माल्य ने राजा साम्य से कहा—"मुझे आप से एक जरूरी बात करनी है।"

माल्य की बात पूरी होने के पूर्व ही अवंत ने कहा—"राजन्, मुझे आप से एक मुख्य विषय पर चर्चा करनी है।"

महाराजा साम्य ने शांतिपूर्वक कहा—"बेटे, तुम दोनों थके मालूम होते हो! मेरे अतिथि बनकर थोड़े दिन हमारे अतिथिगृह में विश्राम करो! दो-चार दिन बाद मैं तुम लोगों की बातें सुनूँगा। तब तक तुम सब्र करो।"

इसके उपरांत राजा ने अपने परिचारकों को संकेत किया। वे राजकुमारों को अतिथिगृह में ले गये और उनके ठहरने का अलग अलग प्रबंध किया।

दूसरे दिन सवेरे युवराज अवंत अतिथि गृह के सामने मैदान में टहल रहा था, तब माल्य अचानक तलवार खींचकर उस पर टूट पड़ा। खड्गयुद्ध में प्रवीण अवंत भी अपनी आत्मरक्षा करने लगा।

उस प्रदेश के निकट ही उद्यान में काम करनेवाले माली ने इस घटना को देखा। वह चिल्ला उठा। उसकी चिल्लाहट सुनकर सिपाही और अधिकारी दौड़े आये। उन लोगों ने राजकुमारों के युद्ध को रोका। एक सैनिक अधिकारी ने माली से पूछा—"कहो, क्यों इनके बीच युद्ध हुआ?"

माली ने अवंत को दिखाते हुए कहा—"ये राजकुमार टहल रहे थे, तब उन राजकुमार ने इन पर हमला कर दिया।"

"युवराज, आपने ऐसा क्यों किया?" सैनिक अधिकारी ने माल्य से पूछा।

"राजकुमारी को पहले मैंने देखा। इसलिए उसके साथ मुझे विवाह करना है। उसके साथ विवाह करने के लिए ये कौन होते हैं?" माल्य ने उत्तर दिया।

"इस बात का निर्णय करने वाले हमारे राजा हैं। तब तक आप दोनों फिर से

लड़ न पड़े। इसके लिए आप दोनों पर कड़ा पहरा बिठाया जाएगा।" यों कहकर सैनिक अधिकारी ने सैनिकों को आवश्यक आदेश दिया।

राजकुमारी श्रावस्ती ने नदी तट पर से लौटते ही वहाँ की घटना अपने पिता को सुनाई। इसलिए राजा ने युवराजाओं के चाल-चलन का पता लगाने के लिए अतिथिगृह में गुप्तचरों को नियुक्त किया था।

युवराजाओं के द्वन्द्व युद्ध करने के उपरांत राजा ने एक के बाद एक को अपने गुप्त कक्ष में बुलवा कर उनसे बातचीत की।

राजा ने पहले अवंत से पूछा—"बेटा, तुम मुझ से कोई खास बात बताना चाहते थे, वह क्या है?"

"महाराज! यदि आपका अनुग्रह मुझ पर हो, तो मैं आप से निवेदन करना चाहता हूँ कि आप अपनी पुत्री का मेरे साथ विवाह करें। जब से मैंने उसे देखा, मुझे लगा कि वही मेरी स्वप्न सुंदरी है। मैं अवंतिका के राजा अविनाश का पुत्र हूँ और मेरा शुभनाम अवंत है।" अवंत ने उत्तर दिया।

महाराजा साम्य ने मंदहास करते हुए कहा—"अच्छी बात है! मुझे सोच लेने दो। तब तक तुम मेरे अतिथि बनकर यहीं रह जाओ।"

अवंत के चले जाने पर राजा ने माल्य को बुला भेजा। तब राजा ने उस से पूछा—"राजकुमार, विशेष समाचार क्या है? तुम मुझ से कोई जरूरी बात करना चाहते थे न?"

"मेरा नाम माल्य है! मैं मालागढ़ के राजा मालव्य का पुत्र हूँ। आप की पुत्री के सौंदर्य ने मुझे सम्मोहित किया। मैं उसके साथ विवाह करना चाहता हूँ।" माल्य ने उत्तर दिया।

"दूसरे राजकुमार ने भी मुझ से यही बात कही। इसलिए मुझे सोच लेने दो।" राजा ने कहा।

"राजन, आप को राजकुमारी का विवाह मेरे साथ करना ही होगा। वरना किसी भी प्रकार से में उसको प्राप्त करूँगा।" माल्य ने कहा।

"एक निर्णय पर पहुँचने के लिए मुझे थोड़ी अवधि चाहिए। तब तक तुम मेरे अतिथि बन कर रहो।" राजा ने समझाया। इसके बाद सैनिक माल्य को अतिथिगृह में ले गये।

महाराजा साम्य अब उलझन में पड़ गया। दोनों राजकुमार श्रावस्ती के वास्ते तड़प रहे हैं। दोनों श्रावस्ती के योग्य वर हैं। लेकिन अवंत में कोई दोष नहीं है। उसके चरित्र एवं स्वभाव के बारे में राजा साम्य ने बहुत-कुछ सुन रखा था। थोड़ी देर की बातचीत से उसकी विनयशीलता और अच्छे व्यवहार ने राजा को मुग्ध कर लिया। इसमें कोई संदेह नहीं है कि उसके साथ विवाह करने पर श्रावस्ती सुखी रहेगी।

राजा साम्य माल्य की क्रूरता और पहली पत्नी के प्रति उसका दुष्ट व्यवहार भी जानता था। उसके साथ बातचीत करने पर उसकी कटुता का भी स्पष्ट परिचय मिल गया। इसलिए राजा ने मन में सोचा कि इन दोनों में से श्रावस्ती को यदि किसी के साथ विवाह करना हो तो अवंत के साथ विवाह करना उत्तम है।

यह सोचकर राजा ने तत्काल अपने प्रधान मंत्री को बुला भेजा और उसको सारा समाचार सुनाया।

सारी बातें सुनने पर मंत्री ने सलाह दी—"महाराज, राजकुमारी का अवंत के साथ विवाह करना अति उत्तम है, लेकिन इसके साथ एक उलझन है। माल्य राजकुमारी के वास्ते तड़प रहा है। यदि आप उसके साथ राजकुमारी का विवाह करने से स्पष्ट इनकार करेंगे तो उसका क्रोध भड़क उठेगा। वह और उसका पिता भी नागों के समान हैं। वे हमारी

हानि कर सकते हैं। हमारे देश पर हमला भी कर सकते हैं। इसलिए हमें जो कुछ करना है, उसे युक्तिपूर्वक करना उत्तम होगा।"

"मेरी समझ में नहीं आता कि किस प्रकार की युक्ति से हम लोग काम ले?" राजा ने कहा।

"आप थोड़ा सब्र कीजिए, महाराज! मुझे यदि एक दिन की मोहलत दे तो मैं इस संबंध में हमारे राजपुरोहित तंत्रशास्त्री से बात करूँगा। हाँ, ये माल्य और उसके पिता बड़े ही शिवभक्त हैं न?" मंत्री ने पूछा।

"हाँ, हाँ, महामंत्री, हमारे जैसे वे भी शिवजी के प्रति प्रगाढ़ भक्ति रखते हैं!" राजा ने उत्तर दिया।

"तब तो मेरा विचार काम दे सकता है। लेकिन हमारे तंत्रशास्त्री का जादू भी हमारी मदद दे, तब न!" यों कहते प्रधान मंत्री राजा से आज्ञा लेकर चला गया।

मंत्री ने तंत्रशास्त्री को सारा समाचार सुनाकर कहा—"इस हालत में क्या आप अपने जादू के द्वारा हमारी मदद कर सकते हैं? आप की सहायता राजा तथा देश के लिए भी आवश्यक है। इसी पर राजकुमारी का सुख भी आधारित है।"

"अगर आप मुझे एक दिन की अवधि दे तो मैं शक्ति भर प्रयत्न करूँगा।" तंत्रशास्त्री ने कहा।

तंत्रशास्त्री ने बड़ी देर तक विचार करके आखिर एक उपाय सोचा। तब प्रधान मंत्री के पास जाकर अपना विचार सुनाया। मंत्री परम आनंदित हुआ।

इसके बाद तंत्रशास्त्री की योजना के अनुसार राजा ने माल्य तथा अवंत को बुलवा कर समझाया—"बेटे! तुम दोनों राजकुमारी के साथ विवाह करना चाहते हो! तुम दोनों के पिता बड़े राजा हैं। तुम दोनों सुंदर हो और हमारी पुत्री के योग्य पर हो। तुम में से मैं किसी को भी अपने जामाता चुनूँ तो

दूसरे के प्रति अन्याय होगा। यह मुझे कदापि पसंद नहीं है। इसलिए चुनाव की जिम्मेदारी मैंने राजपुरोहित तंत्रशास्त्री को सौंप दी है। वे कल शिवमंदिर में अर्चना करके निर्णय करेंगे।" इसके बाद राजा ने तंत्रशास्त्री से कहा–"आप जो कुछ करने जा रहे हैं, उसे इन्हें बताइए।"

तंत्रशास्त्री ने उठ खड़े होकर कहा–"महाराज! मैं अंतिम निर्णय का भार शिवजी पर छोड़ रहा हूँ। उनके निर्णय को ये दोनों स्वीकार करेंगे न?"

"मुझे स्वीकार है।" अवंत ने कहा।

माल्य ने थोड़ी देर विचार करके कहा–"मुझे भी स्वीकार है।"
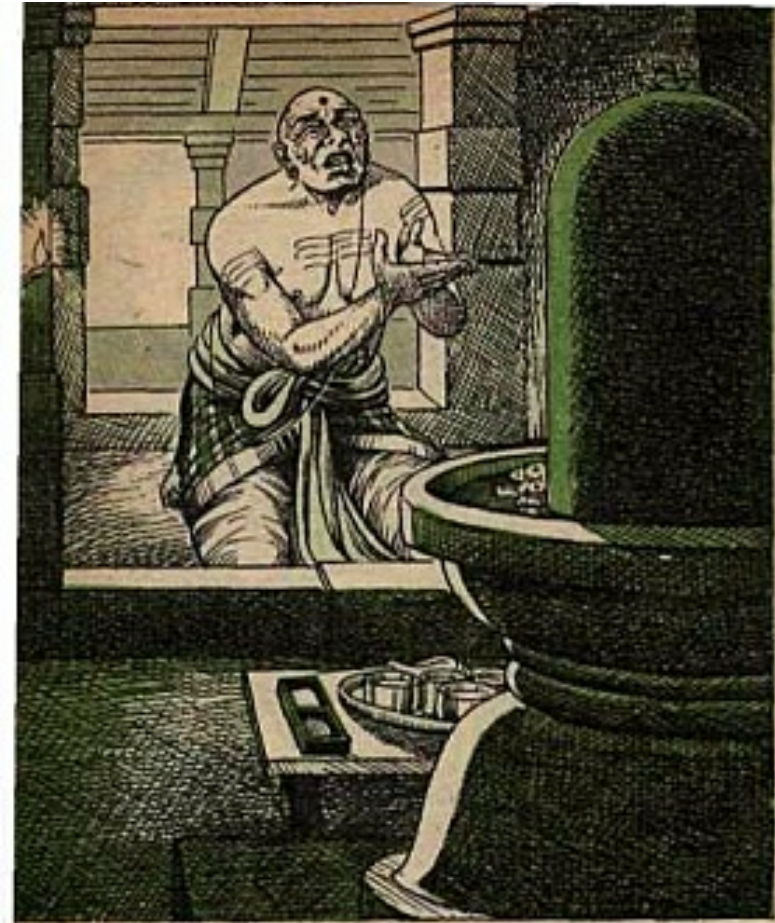
तंत्रशास्त्री ने वह रात शिव मंदिर में बिताई। शिवजी के नाम धोखा देने के अपराध में उनसे क्षमा माँगते रोता रहा।

सवेरा हो गया। पत्तों के तोरणों तथा फूलों से अलंकृत उस मंदिर में अवंत, माल्य तथा राजपरिवार भी आ पहुँचा। तंत्रशास्त्री ने उठकर राजकुमारों से कहा–"पहले आप दोनों इस बात की भगवान के नाम शपथ लीजिए कि भगवान के निर्णय को स्वीकार करेंगे।"

दोनों राजकुमारों ने शपथ ली।

तंत्रशास्त्री ने दियासलाई की पेटियों जैसी दो गत्ते की पेटियों को सामने रखा। उनमें दराज थे। उन पर अलग अलग माल्य तथा अवंत के नाम लिखे गये थे। तंत्रशास्त्री ने उन पेटियों को खोलकर दिखाया कि उनके दराजों में कुछ नहीं है, बल्कि वे खाली हैं। तब उन पेटियों को भगवान के सामने रखा। इसके बाद दो कागज के छोटे टुकड़ों पर राजकुमारी श्रावस्ती का नाम लिखा। वे टुकड़े दोनों पेटियों में एक एक करके रखकर उनके दराज बंद किये। इसके बाद पवित्र जल लेकर पेटियों तथा राजकुमारों पर छिड़का दिया, तब प्रार्थना की–"हे महाशिव! हम पर कृपा करो! हमारी राजकुमारी के योग्य वर प्राप्त हो!"

थोड़ी देर बाद तंत्रशास्त्री ने माल्य के नामवाली पेटी को निकालकर उसके दराज को खोल दिया। पर उसमें कुछ न था। इसी प्रकार अवंत के नामवाली पेटी को खोलकर देखा, उसमें दो चिट थे। दोनों पर श्रावस्ती का नाम लिखा हुआ था।

"महाशिव ने राजकुमारी श्रावस्ती के लिए अवंत को पति के रूप में निर्णय किया है!" तंत्रशास्त्री ने घोषणा की।

माल्य ने चुपचाप उस निर्णय के सामने अपना मस्तक झुकाया। उसने शिवजी को प्रणाम किया, अवंत के साथ आलिंगन करके अपने घोड़े पर चला गया।

अवंत को मंगल वाद्यों के साथ वैभव पूर्वक राजमहल में ले गये। पर प्रधान मंत्री वहीं रह गया। उसने तंत्रशास्त्री से पूछा—"शास्त्रीजी! आप ने इतनी सरलता के साथ ऐसा अद्भुत जादू कैसे किया? आप की मेधा अपूर्व है! क्या आप इसका रहस्य बता सकते हैं?"

"पेटियाँ यहीं पर रखी हुई हैं। आप इन्हें देख लीजिएगा तो अपने आप असली रहस्य प्रकट हो जाएगा।" तंत्रशास्त्री ने उत्तर दिया।

मंत्री ने माल्य के नाम वाली पेटी को हाथ में लेकर उलट-पलट कर देखा। उसके दोनों ओर माल्य का नाम लिखा हुआ था। अवंत का नाम भी दूसरी पेटी के दोनों तरफ़ लिखा हुआ था।

इसके बाद मंत्री ने माल्य के नामवाली पेटी के दराज को बाहर खींचा। दराज के नीचे से एक चिट नीचे गिरा जिस पर श्रावस्ती का नाम लिखा हुआ था। पर जब उसने दराज़ को पूर्ण रूप से बाहर निकाल कर देखा तो उसमें ऊपर एक खाना और नीचे दूसरा खाना था और बीच में एक छोटा-सा गत्ता था। इसी प्रकार अवंत के नाम वाली पेटी के दराज में भी ऊपर-नीचे दो खाने थे।

अब तंत्रशास्त्री का जादू मंत्री की समझ में आ गया। तंत्रशास्त्री ने अवंत की

पेटी के दराज के नीचे के खाने में पहले ही श्रावस्ती के नाम के दो चिट रख दिये थे। इसके बाद सब के सामने जो चिट लिख कर ऊपर के खाने में रखे, उस वक़्त अवंत की पेटी के निचले खाने के चिटों को नीचे गिर जाने से रोकने के लिए अपनी उंगली से दबाकर रखा। तब उन दोनों पेटियों को उलटा कर शास्त्री ने भगवान के सामने रखा। पेटियों के ऊपर तथा नीचे भी दोनों के नाम लिखे गये थे, इसलिए किसी ने उस धोखे के प्रति संदेह नहीं किया। पुन: पेटियों को खोलते समय अवंत की पेटी के निचले खाने में पहले ही रखे गये दोनों चिट बाहर निकल आये। माल्य की पेटी के निचले खाने में कोई चिट न था। सब के देखते समय शास्त्री ने जो चिट रखे थे, वे पेटियों को पलटाते समय निचले खानों में ही रह गये। उनके नीचे गिरने से रोकने के लिए शास्त्री ने अपनी उंगलियों से उन्हें दबाकर रखा था।

"ओह! यही रहस्य है?" यों आश्चर्य प्रकट करते मंत्री ने शास्त्री की ओर देखा तो वह बच्चे की तरह रोते दिखाई दिया।

"महाशिव क्या मेरी रक्षा करेंगे? मैंने उनका नाम लेकर पाप किया। उस पाप का कोई परिहार नहीं है। भगवान अवश्य मुझे दण्ड देंगे।" तंत्रशास्त्री ने कहा।

"शास्त्रीजी! आप ने कोई पाप नहीं किया। भगवान का नाम लेकर आप ने धोखा किस को दिया? एक क्रूर एवं पत्थर के दिलवाले को! यह काम करके आपने एक दुष्ट से एक अबोध कन्या की रक्षा की। आप ने अपने राजा, अपनी मातृभूमि तथा अपनी जाति की रक्षा की। इतने बड़े उद्देश्य को लेकर आप ने यह छोटा-सा जो धोखा दिया, उसके लिए महाशिवजी जरूर क्षमा करेंगे! वे सब कुछ जानते हैं।" मंत्री ने समझाया।

सांत्वना की ये बातें सुनने पर शास्त्री का हृदय थोड़ा हल्का हुआ। उसने भक्तिपूर्वक आँखें बंद कीं।

चोरी की आदत

राजा महेन्द्रवर्मा के राज्य में एक बार चोरों का बोलाबाला हद से ज़्यादा हो गया। राजा ने चोरों को पकड़ने का अच्छा इंतज़ाम किया और कई चोरों को पकड़ कर कड़ी सजा दे दी; फिर भी देश में चोरियाँ होती रहीं। लक्खीराम नामक एक डाकू राजा की परवाह किये बिना चोरियाँ करता ही रहा।

एक दिन राजा के दरबार में एक साधू आया। राजा साधू-सन्यासियों के प्रति अधिक श्रद्धा रखता था, इसलिए मुनि का उचित सत्कार किया, तब अपने देश में होनेवाली चोरियों का ज़िक्र किया।

"राजन, आपके देश में लक्खीराम नामक एक बड़ा ही मशहूर डाकू है। यदि आप उसे बन्दी बनावे तो चोरों की झंझट से आप मुक्त हो सकते हैं।" साधू ने समझाया।

राजा ने साधू को थोड़े दिन तक अपने यहाँ अतिथि बने रहने की अभ्यर्थना की। साधू ने मान लिया। इसके बाद तीन दिन लगातार राजा के खज़ाने में चोरी हुई। राजा ने यह बात साधू से बताई।

"राजन, यह तो लक्खीराम की ही करतूत है। आप इस बात का ढिंढोरा पिटवा दीजिए कि लक्खीराम आकर माफ़ी मांगे तो उसे अच्छा पुरस्कार दिया जाएगा। इसके बाद आप उसकी परेशानी से मुक्त, हो जायेंगे।" साधू ने कहा।

राजा ने इसी प्रकार ढिंढोरा पिटवाया।

दूसरे दिन साधू राजा के दरबार में आया और बोला–"महाराज, क्षमा कीजिए। आपके खजाने में मैंने ही चोरी की है। मैं ही लक्खीराम हूँ। वेष बदल कर आपके पास आया हूँ।" यों कहते उसने अपना वेष बदल डाला।

सुधीर बंसल

इसे देख राजा आश्चर्य में आ गया। लक्खीराम की होशियारी पर राजा चकित रह गया। ढिंढोरा पिटवाने के अनुसार राजा ने लक्खीराम को न केवल पुरस्कार दिया, बल्कि उसको अपने दरबार में एक छोटी सी नौकरी भी दी।

कुछ दिन बाद राजा ने लक्खीराम के हाथ एक चिट्ठी देकर कहा–"इस चिट्ठी को तुम हमारे पड़ोसी राजा जयसिंह के हाथ देकर उससे जवाब लेते आओ।"

लक्खीराम घोड़े पर सवार हो पड़ोसी देश के लिए चल पड़ा। रास्ते में एक जंगल पड़ा। एक जगह एक बूढ़े ने लक्खीराम को रुकने के लिए कहा। लक्खीराम रुक गया।

"महाशय, आप कहाँ जा रहे हैं?" बूढ़े ने घुड़ सवारी से पूछा।

"पड़ोसी राज्य में।" लक्खीराम ने जवाब दिया।

"मशाशय, मुझे भी अपने साथ घोड़े पर ले जाइए।" बूढ़े ने फिर पूछा।

"वहाँ पर तुम्हें कौन सा काम है?" लक्खीराम ने पूछा।

"मैं गरीब आदमी हूँ। बहुत दिनों से मैंने जो कुछ धन जमाकर रखा है, उससे मुझे गहने वगैरह खरीदने हैं।" बूढ़े ने फिर उत्तर दिया।

इस पर लक्खीराम ने झट तलवार खींच दी और गरज कर कहा–"अच्छा, यह बात है। वे रुपये मेरे हाथ देकर चले जाओ।"

दूसरे ही क्षण झाड़ियों की ओट से सैनिकों ने आकर लक्खीराम को पकड़ लिया। लक्खीराम चकित रह गया।

इसके बाद सैनिक उसको राजा के पास ले गये। राजा ने लक्खीराम से कहा–"तुमने चोरियाँ करना तो बंद किया, मगर चोरी करने की तुम्हारी आदत छूट गई है या नहीं, यही जानने के लिए मैंने ऐसा किया। तुम जिंदगी भर अब कारागार में पड़े रहो।"

दिन और रात

वीरसिंह एक धर्मात्मा था। उसने सब को उदारता पूर्वक कर्ज दिया, अपनी सारी संपत्ति समाप्त कर वह मर भी गया। इसलिए वीरसिंह का पुत्र जगतसिंह भिखारी बनकर रह गया। कर्जदारों ने ऋण पत्र लिखकर वीरसिंह को नहीं दिये थे, इस वजह से वीरसिंह के मरने पर किसी ने भी कर्ज नहीं चुकाया। जगतसिंह के मन में उस गाँववालों तथा अपने गाँव के प्रति भी विरक्ति पैदा हो गई और वह कहीं जाकर अपने दिन गुजारने के विचार से चल पड़ा।

वह दिन भर और रात को भी जंगली रास्ते से चलकर दूसरे दिन सवेरे तक एक नदी के किनारे पहुँचा। नदी के तट पर थोड़ी दूर में उसे एक सुंदर महल दिखाई दिया। जगतसिंह ने सोचा कि शायद उस महल में उसे आश्रय मिल सकता है। इस ख्याल से वह उत्साहपूर्वक उस महल की ओर बढ़ा। उस वक़्त सूर्योदय होने जा रहा था।

उस महल में से एक व्यक्ति हाँफते हुए जगत सिंह के सामने आया और उससे कुछ बोले बगैर डरते हुए दौड़ता चला गया। उस आदमी के कपड़े फट गये थे। उसकी पीठ पर कोड़े की मारों के निशान थे। जगतसिंह ने उस व्यक्ति को रोककर पूछा–"तुम इस प्रकार डरकर भागे क्यों जा रहे हो? तुम्हारी पीठ पर कोड़े के ये निशान कैसे?"

वह आदमी पल भर रुका, चारों ओर देखकर थोड़ा आश्वस्त हुआ, तब बोला– "मैं भूल से उस महल में पहुँच गया। मैं क्या जानता था कि उसमें दिन और रात का भी प्रवेश होता है?" यह कहते वह भाग खड़ा हुआ।

अमृतलाल कश्यप

जगतसिंह की समझ में वे बातें बिलकुल न आईं। वह कूतूहलपूर्वक उस महल के अंदर गया। भीतर विशाल कमरे, सुंदर दीप, पर्दे, चारपाइयाँ व तस्वीरें देखने में मनमोहक थीं। कहीं किसी व्यक्ति का पता न था। जगतसिंह आश्चर्य के साथ सारे महल में घूमा और फिर वह बैठक में आ पहुँचा।

"मालिक को प्रणाम करती हूँ। आज बादलों की वजह से सूर्योदय देरी से हुआ है। इसलिए मैं भी देरी से आई हूँ।" ये बातें सुन जगतसिंह चौंक उठा।

द्वार पर एक सुंदर युवती खड़ी हुई थी। वह अपने बदन पर सफ़ेद वस्त्र पहने हुए थी। उसके कंठ में चमकनेवाली एक मोतियों की माला पड़ी हुई थी। उनके हाथ में एक सुंदर मोर के परोंवाला पंखा था।

"तुम कौन हो? यहाँ क्यों आई हो?" जगतसिंह ने उस युवती से आश्चर्य के साथ पूछा।

"मेरा नाम दिन है। इस महल में आनेवाले अतिथियों की सेवा करना मेरा काम है।" यों कहते वह कमर कसकर अपने काम में निमग्न हो गई। उसने सभी कमरों में झाड़ू दिया। चुल्हा जलाकर तरह-तरह के पक्वान्न तैयार किये। जगतसिंह विस्मय के साथ उसके सारे काम देखता रह गया।

"रसोई तैयार है। आप भोजन कर सकते हैं।" इन शब्दों के साथ उस युवती ने एक मेज पर चांदी की थाली में सभी प्रकार के व्यंजन परोस दिये। जगतसिंह ने चाव से सारे पदार्थ खाये।

जगतसिंह भोजन समाप्त कर पान चबा रहा था, तब उसके मनोरंजन के हेतु उस युवती ने गाने गाये और नृत्य भी किया। दुपहर के वक़्त जगतसिंह जब रेशमी गद्दे पर आराम करने लगा, तब वह युवती मोर के परोंवाले पंखे से झलते बैठी रह गई।

जगतसिंह जब नींद से जागा, शाम हो गई थी।

"सूर्यास्त होने को है। मैं अब जाती हूँ, फिर कल सुबह आऊँगी।" युवती ने कहा।

ये बातें सुन जगतसिंह दुखी हो बोला– "तुम्हारे जाने की क्या जरूरत है? यहीं रह जाओ।"

"उफ! यह कैसे हो सकता है? क्या रात आकर मुझे निगल न जाएगी?" यों कहते वह तेजी से चली गई।

जगतसिंह निराशापूर्वक उसकी ओर देखते रह गया और अचानक चौंक पड़ा। क्यों कि द्वार पर काले वस्त्र धारण किये हुए एक भयंकर युवती खड़ी दिखाई दी। उसका शरीर भी काला था। कंठ में काले मनकोंवाली माला पड़ी थी। हाथ में कोड़ा था।

जगतसिंह को बैठे हुए देख दांत पीसते कोड़े को पटका कर रात बोली– "अरे, क्या तुम्हारा दिमाग चढ़ गया है! मैं रात हूँ, और यहां खड़ी हुई हूँ तो क्या तुम बैठने की हिम्मत करोगे? इधर आ!"

रात की आंखों तथा स्वर में भी जो अधिकार का भाव टपक रहा था, उसका धिक्कार करने की हिम्मत जगतसिंह को न हुई। वह डरते हुए उठकर उस युवती की ओर बढ़ा।

"पीछे घूम जा।" रात गरज कर बोली। जगतसिंह घूम पड़ा। उसने कोड़े से जगतसिंह की पीठ पर चट से मारा। जगतसिंह की पीठ छिल गई। उसका कुर्त्ता फट गया, साथ ही कोड़े की जहाँ मार पड़ी थी, वह स्थान फूल गया। पीठ पर कोड़े की मार के निशाने साफ़ नजर आने लगे।

जगतसिंह पीड़ा से कराह उठा। रात ठहाके मारकर हंस पड़ी और बोली–"अरे, अभी इस तरह छटपटा गया तो कैसे! सवेरा होने के पहले तुम्हें कोड़े की और तीन मार खानी होगी। हर पहरे पर कोड़े की एक मार पड़ेगी। वक़्त जानने

के लिए तुम्हारी पीठ पर के निशान ही मेरे लिए आधार हैं। मैं पहले से ही भुलक्कड़ हूँ। वक़्त भूल गई तो दिन आ जाएगी। उसके आ जाने पर फिर क्या? मैं उसमें गल न जाऊँ?"

इसके बाद रात ने जगतसिंह से सारा महल साफ़ कराया। चूल्हा जलवाया, रसोई बनवाई। चांदी की थाली में परोसवा कर खूब खाया। तब तांबूल का सेवन करते जगतसिंह से बोली—"अब मेरा मनोरंजन तो करो।"

जगतसिंह नाचा, गाया। दूसरे पहर के प्रारंभ में उसकी पीठ पर कोड़े की दूसरी मार पड़ी। फिर उसके बदन पर सुइयाँ चुभोते हुए रात ने आनंद का अनुभव किया। तीसरे पहर के आरंभ में उसने जगतसिंह की पीठ पर तीसरी बार कोड़ा चलाया। उसके द्वारा पंखा झलते थोड़ी देर सो गई।

नींद से जागने पर जगतसिंह की पीठ पर के निशानों का हिसाब लगाया। तब याद किया कि तीन पहर बीत चुके हैं, इसके उपरांत चौथे पहर के प्रारंभ में चौथी बार कोड़ा चलाकर जगतसिंह के बाल नोचे, कपड़े फाड़ दिये, नाना प्रकार से सताया, सूर्योदय के होते देख बोली—"फिर मैं शाम को आ जाऊँगी। दिन आ जाएगी तो खतरा पैदा होगा।" इन शब्दों के साथ वह घबड़ाये हुए चली गई।

उसके चले जाने के थोड़ी देर बाद नमस्कार करते दिन आयी। उसने प्रवेश करते ही जगतसिंह की पीठ पर के निशानों पर अपने मोर के परोंवाले पंखे का स्पर्श कराया। आश्चर्य की बात थी कि वे निशान एक दम गायब हो गये! फिर सारा महल साफ़ करके उसने खाना बनाया। जगतसिंह के सोते वक़्त पंखा झलते बैठी रह गई।

नींद का बहाना करनेवाला जगतसिंह उठ बैठा और पूछा—"मुझे प्यास लगी है, पानी चाहिए!"

वह युवती पंखा वहीं पर छोड़ भीतर चली गई। जगतसिंह ने पंखे में से मोर का एक पर निकाला और उसे बिस्तर के नीचे छुपाया।

सूर्यास्त होते देख दिन चली गई। उसके थोड़ी देर बाद रात आई। पिछली रात की भांति जगतसिंह की पीठ पर कोड़ा मारकर उसने सारे काम कराये। दूसरे और तीसरे पहरों में भी कोड़ा मारकर वह लेट गई।

जगतसिंह ने बिस्तर के नीचे से मोर का पर निकाला, उससे अपनी पीठ पर के निशानों में से एक को छुआ दिया। तुरंत एक निशान गायब हो गया।

चौथे पहर के प्रारंभ में रात उठ बैठी, कोड़ा हाथ में लेते बोली—"शायद यह अंतिम पहर है!"

"तुम भी भुलक्कड़ हो गई हो! अभी दो ही पहर गुज़र गये हैं। चाहे तो देख लो।" यों जवाब देते जगतसिंह ने अपनी पीठ दिखाई।

"तब तो एक पहर और सो सकती हूँ।" यों कहते जगतसिंह की पीठ पर कोड़ा मारकर वह फिर सो गई। रात ने थोड़ी देर बाद जब जागकर देखा, सूर्योदय हो चुका था, तब तक दिन भी महल के भीतर आ गई।

दिन को देखते ही रात चिल्ला कर भाग गई। मगर सूरज की किरणों के छूते ही रात का शरीर ओस की भांति पिघल गया।

"रात के चले जाने पर मैं यहाँ क्यों रहूँ? मैं यह सोचकर आ गयी कि वह आ जाएगी।" इन शब्दों के साथ दिन भी चली गई।

इसके उपरांत जगतसिंह अपने पास के मोर के 'पर' से रोगियों के घावों का इलाज़ करते आराम से अपने दिन गुज़ारने लगा। थोड़े दिन बाद एक सुंदर कन्या के साथ विवाह करके जगतसिंह उसी महल में रह गया।

सौतेला रिश्ता

पुराने जमाने में बग्दाद शहर में एक बहुत बड़ा सौदागर था। उसकी बीबी बड़ी खूबसूरत थी। साथ ही वह सरल स्वभाव की थी। वे दोनों मिया-बीबी आपस में प्यार करते थे और एक दूसरे की इज्जत भी किया करते थे।

सौदागर महीने में पंद्रह दिन शहर से बाहर रहता था। ये पंद्रह दिन वह कहाँ बिताता था, यह बात उसकी बीबी जानती न थी। घर पर जो पंद्रह दिन रहता, बीबी के साथ प्यार दिखाता और उसकी हर प्रकार की इच्छा की पूर्ति करता था। उसे छोटी से छोटी भी तक़लीफ़ होने नहीं देता था, इसलिए सौदागर की बीबी उससे कभी यह शिकायत न करती । न थी कि महीने में पंद्रह दिन तुम कहाँ जाते हो?" सौदागर भी यह बात अपनी बीबी से बताता न था। मगर सौदागर का समाचार जानने की इच्छा उसकी बीबी के मन में थी।

कई दिन बीत गये। मगर सौदागर के व्यवहार में कोई परिवर्तन न आया। वह महीने में पंद्रह दिन कहीं चला जाता था। घर पर रहते वक़्त बीबी के साथ अच्छा पेश आया था।

आख़िर बीबी का सब्र जाता रहा। उसका शौहर कहाँ जाता है, कहाँ रहता है, यह बात जानने की इच्छा बीबी में बढ़ती गयी, यह इच्छा उसकी मानसिक बीमारी का कारण बनी। आख़िर उसने अपनी एक विश्वासपात्र बूढ़ी को अपने शौहर का सारा समाचार सुनाया, उसके हाथ ज़रूरी ख़र्च के लिए धन दिया, तब अपने पति का रहस्य जान लाने की मिन्नत की। उस वक़्त सौदागर शहर में न था।

दुर्गा प्रसाद

थोड़े दिन बाद बूढ़ी ने लौटकर बताया कि सौदागर ने दूसरे शहर में एक औरत के साथ शादी की है और वह महीने में पंद्रह दिन उसके साथ बिताता है।

सौदागर की बीबी ने बूढ़ी को इनाम दिया। उसने क़सम कराई कि वह यह बात किसी से नहीं बताएगी। उस दिन से उसे अपनी सौत की याद करने पर ईर्ष्या पैदा हो गई। आज तक उसके पति ने भी यह बात उससे छिपा रखी है, इसलिए उस पर भी गुस्सा आया। लेकिन उसने यह निर्णय किया कि उसका पति उसके साथ अच्छा व्यवहार करता है, इस वजह से उसके इस निजी मामले के बारे में दखल देना नहीं चाहिए। उसने इस रहस्य को अपने मन में ही गुप्त रखा। उसका पति यह नहीं जानता था कि उसका रहस्य उसकी बीबी पर प्रकट हो गया है।

उन्हीं दिनों में एक दिन रात को सौदागर अचानक दिल की बीमारी से मर गया। उसके कोई संतान न थी, इसलिए उसकी सारी जायदाद उसके रिश्तेदारों को प्राप्त हुई, मगर उसकी बीबी को एक हिस्सा मात्र मिला।

अपने पति की मृत्यु के दुख से थोड़ा शांत हो जाने पर उसे अपनी सौत की याद आई। वास्तव में वह भी अपने पति के लिए उसी के समान एक पत्नी है। उसी की भाँति उस औरत ने भी पति को सुख पहुँचाया है। इस कारण

उसको भी पति की जायदाद में हिस्सा मिलना चाहिए। यह बात सच है कि उन दोनों ने परस्पर एक दूसरे का चेहरा नहीं देखा है। उसके पति ने भी उस औरत के बारे में कभी उससे कुछ बताया न था।

फिर भी वह अन्याय न कर सकी। उसने अपने हिस्से की जायदाद में से आधा हिस्सा अपनी सौत के नाम लिखवा कर बूढ़ी के हाथ भेजते हुए एक चिट्टी भी यों लिख दी :

"बहन, मैंने आज तक तुम को नहीं देखा। मेरे पति ने भी तुम्हारे बारे में कभी कुछ न बताया; फिर भी मुझे मालूम हो गया कि उन्होंने तुम्हारे साथ शादी की है और तुम्हारे साथ गृहस्थी चलाई हैं। यह खबर मैंने भी अपने पति से गुप्त रखी थी। अब वे हमेशा के लिए चल बसे हैं। इसलिए मुझे जो जायदाद मिली है, उसमें से आधा हिस्सा तुमको भी मिलना चाहिए। मैं इस संबंधी ज़रूरी काग़ज़ात भेज रही हूँ, तुम स्वीकार करो। तुम्हारा यह रहस्य तुम्हें, मुझे, इस बूढ़ी को तथा खुदा को छोड़ और कोई नहीं जानता।"

थोड़े दिन बाद बूढ़ी एक और चिट्ठी लेकर आ पहुँची।

"दीदी! मेरे बारे में असलियत जानकर भी तुमने किसी पर प्रकट न किया। तुम्हारा सब्र तारीफ़ के लायक़ है। तुम्हारी उदारता के सामने मैं सर झुकाती हूँ। मगर तुम्हारी जायदाद में हिस्सा पाने का हक़ मुझे नहीं है। क्योंकि तुम्हारे पति ने यहाँ से जाने के पहले मुझे तलाक़ दिया था। मैं अब उनकी पत्नी नहीं हूँ। तुम मुझे अपनी सौत के रूप में नहीं, अपनी बहन के रूप में स्वीकार करो। हम जिंदगी भर बहनें बनकर रहेंगी।"

यह चिट्ठी पढ़कर सौदागर की बीवी उस युवती की सच्चाई पर मुग्ध हुई और उस दिन से उसके साथ अपना स्नेह संबंध बनाये रखा।

१५३. प्राचीन ग्रीक रंगमंच

एपिडौरस के पास इस प्राचीन रंगमंच का निर्माण पोलीक्लिटस नामक प्रसिद्ध शिल्पी ने किया है। चित्र के वृत्त में अभिनेता खड़े हो जाते थे। इस नाटकशाला में १६,००० प्रेक्षकों के बैठने की जगह थी। इसके निर्माण की विशेषता यह है कि अभिनेताओं से बहुत दूर रहनेवाले प्रेक्षकों को भी उनका वार्तालाप स्पष्ट सुनाई देता था।

दंभ का मूल्य

एक गाँव में शंकर नामक एक युवक था। उसके विवाह के थोड़े ही दिन बाद एक पर्व आ पड़ा। पर्व के दिन उसने अपना ससुराल जाना चाहा। ससुराल काफ़ी दूर था। यात्रा के लिए अनुकूल हो तथा साथ ही देखनेवाले दंग रह जाय, इस ख्याल से उसने किराये पर एक घोड़ा ठीक किया। घोड़े पर जाते वक़्त साधारण वस्त्र पहन कर जाना उसे अच्छा मालूम न हुआ। उसने धोबी के यहाँ जाकर क़ीमती वस्त्र किराये पर लिया। बढ़िया वस्त्र पहन कर सिर पर पगड़ी बांध ली, तब घोड़े पर सवार हो चल पड़ा।

घोड़ा सवारी के क़ाबू में आनेवाला न था। उल्टे घुड़सवारी करने की आदत न रखनेवाला शंकर घोड़े की वजह से नाना प्रकार की यातनाएँ झेलते ससुराल पहुँचा। तब तक अंधेरा फैल गया। शंकर ने सोचा कि रात के वक़्त घोड़े पर ससुराल जाने से देखेगा ही कौन? उसके बढ़ियाँ वस्त्र भी कोई देखेगा नहीं और न कोई उसकी क़िस्मत पर ईर्ष्या करेगा। इसलिए उसने सोचा कि रात कहीं बिता कर सवेरा होने पर ससुराल चला जाय।

गाँव के बाहर शंकर ने एक सराय देखी। उसके ओसारे में कोई फटे-पुराने कपड़े पहन कर बैठा था। वह एक अनाथ भिखारी था।

शंकर ने उसके निकट जाकर पूछा— "सुनो, इस सराय का मालिक कौन है?"

"और कौन है? मैं ही हूँ।" भिखारी ने जवाब दिया।

"तब तो क्या मैं यह रात इस सराय में बिता सकता हूँ?" शंकर ने पूछा।

भिखारी ने सोच कर उत्तर दिया— "रात को यहाँ ठहर सकते हो, मगर शर्त

यह है कि मेरे लिए तुम्हें गाँव में जाकर भिक्षा मांग लाना होगा। सराय में खाने का कोई इंतजाम नहीं है। तुम्हें भी तो खाना चाहिए।"

"अरे, मैं भी भीख मांगना नहीं जानता।" शंकर ने जवाब दिया।

"यह कोई जानने की विद्या नहीं। तुम इन्हीं कपड़ों के साथ भीख मांगने जाओगे तो कोई एक कौर भी न देगा। ये कपड़े उतार कर मेरे फटे-पुराने कपड़े पहन लो, घर-घर, द्वार-द्वार जाकर चिल्लाओ– "माई! मुट्ठी भर चावल दो।" जो भी मिलेगा, इस झोली में ले लो। झोली के भरते ही बस, वापस चले आओ। मजे से दोनों खा लेंगे। रात यहाँ पर बिताओ, सवेरा होते ही तुम अपने कपड़े पहन लो। घोड़े पर सवार हो अपने रास्ते चले जाओ।" भिखारी ने समझाया।

शंकर ने अपने कपड़े उतार कर भिखारी के कपड़े पहन लिये। उसको सावधानकर झोली को कंधे पर लटकाये चल पड़ा। दो-तीन घरों के सामने जाकर शंकर चिल्लाया–"माई! मुट्ठी भर चावल दे दो।" तब तक उसे भीख माँगने का तरीक़ा मालूम हो गया। कुछ औरतों ने चावल दिया, कुछ औरतों ने धुतकार भी दिया। जल्दी जल्दी झोली के भरते देख उसे आश्चर्य हुआ। वह अब तक जानता न था कि भिखारियों को भर पेट खाना भी मिल जाता है।

इस उत्साह में भूलकर वह अपने ससुराल के सामने आया और चिल्ला उठा–" माई, मुट्ठी भर चावल दे दो।"

शंकर की चिल्लाहट सुनते ही उसकी सास को लगा कि यह उसके दामाद का कंठ है। वह लालटेन लेकर बाहर आई। देखती क्या है, वह भिखारी और कोई नहीं, बल्कि उसका दामाद ही है।

"बेटा, यह क्या है? ये कपड़े कैसे? और यह झोली कैसी? भीख क्यों माँगते हो? तुम्हें क्या हो गया है?" यों जोर-शोर से चिल्लाने लगी। इससे घर भर के लोग बाहर आ गये। सब लोग नाना प्रकार के सवाल करते हुए शंकर को भीतर ले गये।

शंकर का दुख उमड़ पड़ा। वह अपने ससुराल में जैसे ठाठ के साथ जाना चाहता था, वैसे अपमानित हुआ। उस दुख की हालत में उसे कैसे झूठ बोलकर अपनी हालत को छिपाना है, समझ में न आया।

"मैं क्या बताऊँ? मैं जरीदार रेशमी वस्त्र पहने, पगड़ी बांधे, घोड़े पर घर से चल पड़ा। रास्ते में चोरों ने मुझे लूटा, मेरे कपड़े और घोड़े को हड़प लिया। अंधेरा हो गया था, वरना मैं चोरों को पहचान लेता अपने कपड़े लत्तों के साथ घोड़े को वापस लाता; फिर भी वे लोग जायेंगे कहाँ? सवेरा होते ही उन्हें पकड़कर मैं अपनी चीज़ों को वापस ले लूंगा।" शंकर ने समझाया।

ससुरालवालों ने शंकर को समझाया, उसे नहलाया, अच्छे वस्त्र पहनने को दिये, तब खाना खिलाया। सबके सो जाने पर शंकर चुपके से उठ बैठा। सराय के मालिक को असली बात बताने के लिए निकल पड़ा। सराय में पहुँच कर देखता क्या है? वहाँ पर न भिखारी था और न शंकर के कपड़े या घोड़ा ही था। वह भिखारी शंकर के कपड़े लेकर घोड़े पर कभी का भाग गया था।

भाग्य-देवी

प्राचीनकाल में चीन के एक छोटे-से गाँव में वांग नामक एक गरीब किसान था। उसने जब होश संभाला, तब उसका अपना कहनेवाला कोई न था। बाप-दादों की संपत्ति डेढ़ एकड़ की ज़मीन मात्र बच गई थी। वांग खेती करके अपने ख़र्च के बाद थोड़ा-बहुत बचा लेता था।

वांग के खेत से सटकर थोड़ी बंजर भूमि थी। वांग चाहता था कि उस बंजर भूमि को खरीद कर उसे अपने खेत में मिला दिया जाय। वह बंजर एक व्यापारी की थी। व्यापारी बड़ा ही अमीर था। वह लोगों को कर्ज दे-देकर, उनकी ज़मीन-जायदाद पर कब्ज़ा करके अमीर बन बैठा था। वह बंजर भूमि भी उसने इसी तरह प्राप्त की थी।

एक दिन वांग ने व्यापारी से मिलकर अपनी इच्छा प्रकट की और उस ज़मीन का मूल्य पूछा। व्यापारी ने सोचा कि वांग बंजर भूमि खरीदने के लिए लालायित है, वह उस जमीन को अपने खेत में मिलाकर उसको उपजाऊ बना सकता है, यह सोच कर व्यापारी ने बंजर भूमि का दाम बहुत ज़्यादा बताया।

मगर वांग के पास उतना मूल्य चुकाने को धन न था। उसके पास सिर्फ़ खेत का आधा ही मूल्य था। व्यापारी ने खेत का आधा मूल्य लेकर बाक़ी आधा के लिए वांग से ऋण-पत्र लिखवाया। वांग ने व्यापारी से पूछा कि उसे भी इस आशय का पत्र लिखकर दे कि उसने व्यापारी से वह बंजर भूमि खरीद ली है। मगर व्यापारी ने बताया कि पूरा ऋण प्राप्त हो जाने पर वह ऐसा ही लिखकर देगा।

वांग बंजर प्राप्त हो जाने की खुशी में घर चला गया।

कुलदीप सिंह

थोड़े दिन बीत गये। एक दिन यह देखने के लिए वह व्यापारी उस बंजर भूमि की ओर गया कि देखें, वांग उस भूमि में कैसी खेती करता है। उस खेत में वांग को हल जोतते व्यापारी ने देखा। व्यापारी उस बंजर को पहचान ही न पाया। क्योंकि हल जोतने से वह बिलकुल बदल गई थी।

व्यापारी के देखते वांग के हल से कोई चीज़ टकरा गई। वांग ने हल जोतना रोक कर फावड़े से खोदना शुरू किया। व्यापारी जल्दी-जल्दी वहाँ पहुँचा। वांग ने उस गड्ढे में से दो सोने की सुराइयाँ ऊपर निकालीं। वे सुराइयाँ बहुत ही पुराने जमाने की थीं। चीन में उन दिनों में यह विश्वास था कि भाग्यदेवी अगर किसी की मदद करना चाहती है तो सोने की सुराहियों के रूप में वह उसको प्राप्त होती है। यह बात वांग नहीं जानता था, पर व्यापारी जानता था। इसलिए उसने बताया कि सोने की सुराइयाँ उसी की हैं; पर वांग ने न माना, इस वजह से दोनों न्यायाधीश के पास पहुँचे।

वांग ने न्यायाधीश से निवेदन किया कि वह व्यापारी से ज़मीन खरीद कर खेत जोत रहा था, तब उसे ये सुराहियाँ प्राप्त हो गयीं।

इस पर व्यापारी ने न्यायाधीश से शिकायत की–" महाशय, यह दगाबाज है। वास्तव में वह बंजर ज़मीन मेरी है।

मैंने वह ज़मीन इसे नहीं बेची। इसके द्वारा जुतवा रहा था, तभी ये सुराहियाँ मिल गईं। भाग्यदेवी इस रूप में मुझे वर चुकी है। वांग लोभ में पड़कर इन्हें अपनी बता रहा है।"

"सरकार! मैंने वह ज़मीन ख़रीद ली है।" वांग ने कहा।

"इसका सबूत क्या है?" न्यायाधीश ने पूछा।

वांग का चेहरा सफ़ेद पड़ गया। उसने सारी हालत सविस्तार न्यायाधीश को बताई।

न्यायाधीश को व्यापारी की दगेबाजी मालूम हो गई। लेकिन उसने प्रकट रूप में कहा–"भाग्यदेवी ने व्यापारी को वर लिया है। उसकी बंजर में जो सुराहियाँ मिल गईं, वे उसी की हो सकती हैं।" यों सब के सामने न्यायाधीश ने फ़ैसला सुनाया और सुराहियों को व्यापारी के हाथ सौंप दिया।

व्यापारी खुशी के साथ घर चला गया।

इसके बाद वांग ने न्यायाधीश से कहा– "सरकार! सुराहियाँ चली गयीं तो कोई बात नहीं, कम से कम मेरी बंजर भूमि मुझे वापस दिलाइए।"

"तुम निराश मत होओ।" यों कहकर न्यायाधीश ने वांग को भेज दिया।

दूसरे दिन सवेरे न्यायाधीश कुछ सिपाहियों को साथ ले व्यापारी के घर गया और उसे बंदी बनाया। यह खबर
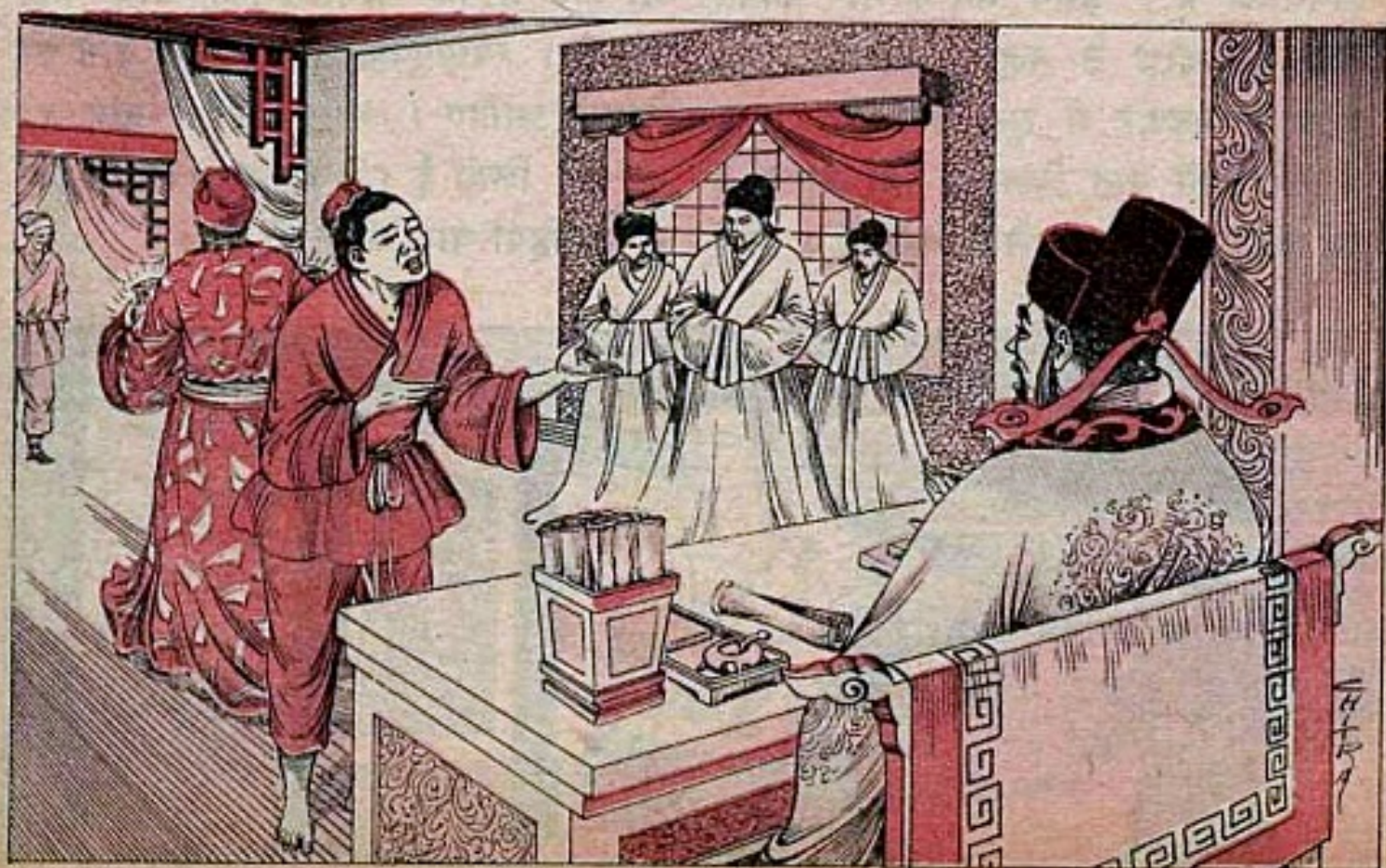
पल भर में सारे गाँव में फैल गयी और बहुत से लोग वहाँ पर जमा हुए ।

न्यायाधीश ने लोगों से कहा–"यह व्यापारी कल यह बताकर झूठ बोला कि ये सुराहियाँ इसको बंजर भूमि में मिल गई हैं । वास्तव में ये हमारे राजा के खजाने की हैं । कल रात को राजा के गुप्तचरों ने मुझे यह समाचार दिया है । सुराहियों को चुराने वाले को बन्दी बनाने का राजा ने आदेश दिया है । इसलिए मैं इस व्यापारी को बन्दी बना रहा हूँ । मुझे लगता है कि इस व्यापारी को भयंकर दण्ड मिलेगा ।" यों कहते व्यापारी की ओर देखा ।

ये शब्द सुनते ही व्यापारी को लगा कि मानो उसके कलेजे की धड़कन बंद होनेवाली है । उसने भय के मारे काँपते हुए न्यायाधीश से कहा–"महाशय, कल लोभ में पड़कर मैं झूठ बोल गया था । मैं चोरी की बात बिलकुल नहीं जानता । यह बंजर जमीन अब मेरी नहीं है । मैंने इसे वांग को कभी बेच दी थी । उसी ने इन सुराहियों को जमीन में गाड़ कर कल बाहर निकाला है । इसलिए यह दण्ड वांग को ही दिलवा दीजिए ।"

"इसका सबूत क्या है?" न्यायाधीश ने व्यापारी से पूछा । तुरंत व्यापारी ने वह ऋण-पत्र लाकर दिखाया जो वांग ने उसे लिखकर दिया था ।

इसी की प्रतीक्षा करनेवाले न्यायाधीश ने उस पत्र को वांग को दिलाया, भीतर से सुराहियाँ मँगवाकर कहा–"महाशयो, इस व्यापारी ने वांग के भोलेपन को देख उसको धोखा देना चाहा । लेकिन मैं व्यापारी की बातों पर विश्वास न कर पाया, इसलिए मैंने यह नाटक रचा । ये सुराहियाँ राजा की नहीं हैं । यह बात भी झूठ है कि राजा इनकी खोज करा रहे हैं । न्यायपूर्वक ये सुराहियाँ वांग को मिलनी चाहिए । भाग्य देवी ने वांग को ही वर लिया है ।" यों कहते न्यायाधीश ने सुराहियाँ वांग को दे दीं ।
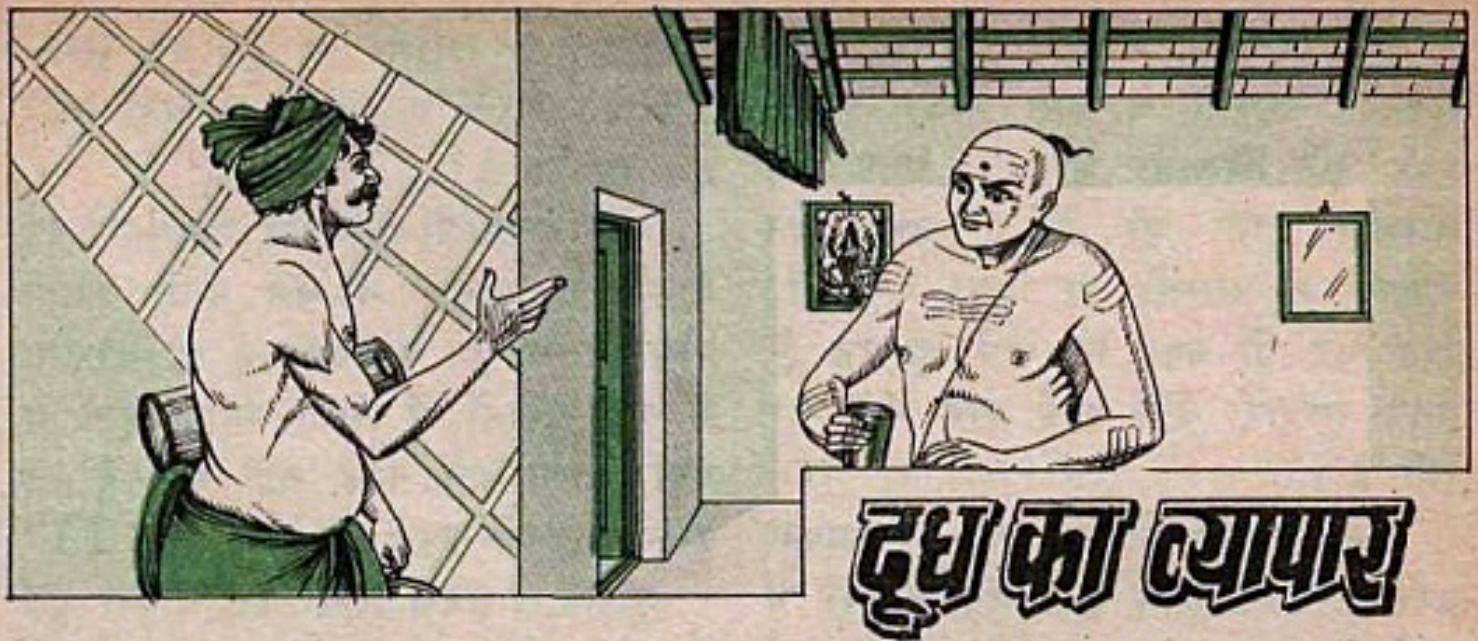
दूध का व्यापर

देवगढ़ नामक गाँव में गोकुलदास नामक एक किसान था। खेतीबारी में उसे बराबर नुक़सान ही होता रहा। इसलिए उसने हाट में जाकर चार गायें और चार भैंसें खरीद लीं, इस तरह उसने दूध का व्यापार शुरू किया। गोकुलदास की थोड़ी-बहुत मदद हो, इस ख्याल से गाँव के बहुत से लोग उसी के यहाँ से दूध खरीदने लगे। उस गाँव का वैद्य सोमशास्त्री भी गोकुल के यहाँ से ही दूध खरीदता था।

धीरे धीरे गोकुलदास की तक़लीफ़ें दूर हो गईं। उसकी आमदनी भी बढ़ गई। लेकिन उसके मन में धन के प्रति लोभ बढ़ता गया। इस कारण वह दूध में पानी मिलाकर बेचने लगा।

एक दिन सोमशास्त्री ने गोकुल से पूछा—"भाई, आजकल दूध पतले क्यों है?" "गरमी का मौसम है न! मवेशियों के लिए चारा नहीं है, वे तो पानी पीकर जीते हैं। इसलिए दूध थोड़ा पतला होता जा रहा है।" गोकुल ने जवाब दिया।

कुछ दिन बाद बरसात का मौसम आया। गोकुल की गाय-भैंस कमजोर होती गईं। साथ ही दूध कम होने लगा।

उस गाँव में मनुष्यों तथा जानवरों का इलाज भी सोमशास्त्री ही करता था। इसलिए गोकुल ने सोमशास्त्री के यहाँ जाकर बताया—"वैद्यजी! मेरी गाय-भैंस सूखती जा रही हैं, कोई अच्छी दवा दे दीजिए।"

गोकुल को सबक़ सिखाने का सोमशास्त्री को अच्छा मौक़ा मिला। उसने एक बोतल में कोई पीला द्रव डालकर कहा—"गोकुल! यह दवा सवेरे के वक़्त सानी में मिलाकर भैंसों को दो। इसका दाम दो रुपये है।"

मंजु बाला

उस दिन से गोकुल रोज दो रुपये चुकाकर शास्त्री से दवा लेकर अपनी भैंसों को खिलाता आया। मगर भैंसें कमजोर होती ही गईं। एक दिन गोकुल ने शास्त्री से पूछा—"वैद्यजी! रोज मेरे दो रुपये तो खर्च हो रहे हैं, मगर तुम्हारी दवा कोई काम नहीं कर रही है।"

शास्त्री ने इतमीनान से कहा—"आजकल बरसात का मौसम है। जड़ी-बूटियों में पानी मिल गया होगा, इसीलिए दवा काम नहीं दे रही है।"

यह बात सुनने पर गोकुल को बड़ा क्रोध आया। उसने मुखिये के पास जाकर शिकायत की कि शास्त्री ने रुपये ऐंठकर रंगीन पानी दवा के नाम दिया है।

ये बातें सुन मुखिया भी आश्चर्य में आ गया कि दवा काम नहीं देती है। क्योंकि शास्त्री की दवाइयों पर गाँव भर के लोगों का पूरा विश्वास है।

मुखिये ने शास्त्री को बुलाकर पूछा—"क्या आप ने गोकुल से ये बातें कहीं हैं? यह सच है?"

इस पर शास्त्री ने जवाब दिया—"अगर गरमी के मौसम में भैंसें पानी ज्यादा पीकर पतला दूध दे सकती हैं तो बरसात में जड़ी-बूटियों में पानी ज्यादा होने से दवा पतली बन काम नहीं देती है तो इसमें आश्चर्य करने की क्या बात है?"

मुखिये ने समझ लिया कि गोकुल दूध में पानी मिला रहा है। यह बात भी स्पष्ट हो गई कि गोकुल को पाठ पढ़ाने के लिए ही शास्त्री ने यों नाटक रचा है।

वहाँ पर उपस्थित सभी लोगों ने मुखिये से शिकायत की कि गोकुल दूध में पानी मिलाकर बेच रहा है। गोकुल ने अपना अपराध स्वीकार कर लिया और इस बात की क्षमा माँग ली, यह भी कहा कि भविष्य में वह कभी ऐसा काम न करेगा।

इसके बाद शास्त्री ने गोकुल की भैंसों को अच्छी दवा देकर उनको स्वस्थ बनाया।

महाभारत

युधिष्ठिर ने भोज देकर सभी ऋषियों को तृप्त किया और कृष्ण की ओर से अनेक दान किये। परीक्षित को कृपाचार्य के शिष्य के रूप में सौंप दिया। अपने मंत्रियों को बुलाकर बताया कि वह महा प्रस्थान करने जा रहा है। मंत्रियों ने आपत्ति उठाई, पर उन्हें विभिन्न उदाहरणों द्वारा समझाया।

इसके उपरांत पांचों पांडव और द्रौपदी ने अपने समस्त आभूषण उतारे और वल्कल पहन लिये। अपनी समस्त अग्नियों को जल में मिला कर चल पड़े। उस हालत में उन्हें देखने पर नगर की नारियों को वह घटना याद आई, जब पांडव जुएँ में हारकर वनवास के लिए चल पड़े थे, तब सभी नारियाँ रो पड़ीं। मगर पांडव जरा भी चिंतित नहीं हुए।

पांडव जब नगर को पार कर जा रहे थे, तब एक कुत्ता उनके पीछे चल पड़ा। कुत्ते के साथ कुल सात प्राणी महा प्रस्थान के लिए निकल पड़े। उनके इस उद्देश्य को बदलने के ख्याल से कुछ नागरिकों ने उनका अनुसरण किया, आखिर विवश हो वापस लौट आये। द्रौपदी के साथ पांडवों के चले जाने ही उलूपी गंगा नदी के भीतर तथा चित्रांगदा मणिपुर चली गईं। पांडवों की अन्य पत्नियाँ परीक्षित के पास ही रह गईं।

प्रारंभ में पांडव पूर्वी दिशा में एक के पीछे एक चलते यात्रा करते रहें। उन

६६. स्वर्गारोहण

लोगों ने अनक देश और नदियों को पार किया, कई दिन पश्चात ताहित्य नामक समुद्र के तट पर पहुँचे। अर्जुन तब तक अपने गांडीव तथा अक्षय तूणीर को साथ लिए हुए था।

मार्ग मध्य में अग्निदेव ने पर्वत जैसा शरीर धारण कर प्रत्यक्ष हो कहा-"हे पांडव, मैं अग्निदेव हूँ! अर्जुन का इस वक़्त गांडीव के साथ कोई प्रयोजन नहीं है। उसे अर्जुन को त्यागना होगा। यह तो वरुण का अस्त्र है, अतः इसको वरुण को सौंपना है।"

अर्जुन को अन्य लोगों ने भी समझाया, इस पर उसने अपने गांडीव तथा अक्षय तूणीरों को समुद्र में फेंक दिया। तब अग्निदेव भी अदृश्य हो गया।

इसके बाद पांडव दक्षिण की ओर अभिमुखी हुए। समुद्र के किनारे नैऋती दिशा में चलकर पश्चिम की ओर मुड़े। उन्हें समुद्र में डूबा हुआ द्वारका नगर दिखाई दिया। वहाँ से वे लोग उत्तर की ओर चले। तब उन्हें हिमालय पर्वत दिखाई दिये। उन्हें पार करके जाने पर मेरु पर्वत दिखाई दिया।

पांडव चल ही रहे थे कि रास्ते में द्रौपदी मर कर गिर पड़ी। भीम ने युधिष्ठिर को यह समाचार दिया, लेकिन युधिष्ठिर पीछे मुड़कर देखे बिना आगे बढ़ा।

इसके थोड़ी देर बाद सहदेव गिर गया। इस प्रकार क्रमशः नकुल और अर्जुन के भी गिर जाने का समाचार भीम ने युधिष्ठिर को दिया। फिर भीम भी अपने गिर जाने का समाचार सुनाकर गिर पड़ा। युधिष्ठिर पीछे मुड़कर देखे बिना आगे बढ़ता गया। कुत्ता युधिष्ठिर के पीछे चला जा रहा था।

थोड़ी देर में इंद्र अपने रथ पर बड़ी ध्वनि के साथ आ पहुँचा और युधिष्ठिर से निवेदन किया कि वह उस रथ पर सवार हो जाय! इस पर युधिष्ठिर ने

इंद्र से कहा–"मेरे सभी भाई मर गये हैं। उन्हें भी मेरे साथ आना होगा। द्रौपदी भी हमारे साथ हो! मेरी इस शर्त को आप को स्वीकार करना होगा। उनके विना मैं स्वर्ग में जाना नाहीं चाहूँगा।"

इसके उत्तर में इंद्र ने यों कहा–"वे सब इसके पूर्व ही अपने-अपने शरीर त्याग कर स्वर्ग में पहुँच गये हैं। लेकिन तुम्हें शरीर के साथ स्वर्ग की प्राप्ति होगी। इसलिए चलो मेरे साथ।"

"तब तो यह कुत्ता बड़े ही विश्वास के साथ मेरे साथ चला आ रहा है। इसे भी स्वर्ग में ले जाना होगा। इस कुत्ते को छोड़ अकेले मैं स्वर्ग में जाना नहीं चाहूँगा।" युधिष्ठिर ने अनुरोध किया।

"तुम मेरे समान व्यक्ति होकर स्वर्ग में जा रहे हो। तुम्हें इस कुत्ते से क्या मतलब है? इसको छोड़ दो।" इंद्र ने कहा। पर युधिष्ठिर ने न माना। इंद्र ने समझाया कि कुत्तों को स्वर्ग में स्थान नहीं है, फिर भी युधिष्ठिर ने अपना हठ नहीं छोड़ा।

इस पर कुत्ते के रूप में स्थित यमराज ने युधिष्ठिर के सामने प्रत्यक्ष होकर कहा–"वनवास के समय मैंने एक यक्ष के रूप में तुम्हारी परीक्षा ली। इस वक़्त कुत्ते के रूप में मैंने फिर तुम्हारी परीक्षा ली। तुम्हारे बराबर का व्यक्ति स्वर्ग में भी कोई नहीं है। तुम शरीर के साथ उत्तम लोकों को प्राप्त कर सकोगे।"

इसके बाद इंद्र, यमराज, मरुत्त, अश्वनी देवता तथा अन्य देवताओं ने भी युधिष्ठिर को रथ पर बिठाया और वे सब अपने अपने विमानों में उनके साथ चल पड़े।

"अनेक राजर्षि उत्तम लोकों में आये, लेकिन वे सब शरीर के साथ स्वर्ग में आनेवाले युधिष्ठिर की बराबरी नहीं कर सकते।" नारद ने कहा।

"चाहे सुख हो या दुख, मेरे भाइयों के विना मुझे उनकी आवश्यकता नहीं है।" युधिष्ठिर ने उत्तर दिया।

इसके उत्तर के रूप में इंद्र ने कहा–"राजन, उत्तम लोकों में जानेवाले तुम मानव संबंधों को क्यों नहीं त्यागते? मैं असली बात बता रहा हूँ, सुनो, तुम्हारे भाई उत्तम लोकों को प्राप्त नहीं हुए हैं। इस स्वर्ग को, देवता, सिद्ध तथा देव ऋषियों को तो देख लो?"

"मैं अपने भाइयों को छोड़कर अलग नहीं रह सकता। मेरे भाई, द्रौपदी और हमारे पुत्र–ये सब जहाँ हों, मैं भी वहीं जाऊँगा।" युधिष्ठिर ने दृढ़ स्वर में उत्तर दिया।

स्वर्ग में पहुँचने पर युधिष्ठिर ने देवताओं के बीच एक उत्तम आसन पर बैठे हुए दुर्योधन को देखा। वह अत्यंत प्रकाशमान था। इस पर युधिष्ठिर के मन में ईर्ष्या पैदा हुई, साथ ही उसे इस बात का आश्चर्य भी हुआ कि ऐसे पापी को स्वर्ग कैसे प्राप्त हुआ। वहाँ से पीछे मुड़कर बोला–"लोभी इस दुर्योधन के साथ मुझे स्वर्ग के सुखों की कतई आवश्यकता नहीं।"

नारद ने मुस्कुराकर कहा–"राजन्, स्वर्ग में पुराने वैमनस्य को त्यागना होगा। दुर्योधन ने वीर की मृत्यु प्राप्त कर स्वर्ग पा लिया है।"

"यदि समस्त प्रकार के पाप करनेवाले इस दुर्योधन को स्वर्ग की प्राप्ति हो जाय तो मैं जानना चाहता हूँ कि महान पुण्यात्मा मेरे भाइयों को कौन से

उत्तम लोक प्राप्त हुए हैं? धृष्टद्युम्न, अभिमन्यु तथा उप पांडव कहाँ पर हैं? मैं उन्हें शीघ्र देखना चाहता हूँ।" युधिष्ठिर ने नारद से कहा।

इसके बाद कर्ण तथा अपने हितैषी राजाओं को, जिन लोगों ने उसके वास्ते युद्ध में प्राण अर्पित किये थे, स्वर्ग में न देख युधिष्ठिर आश्चर्य में आ गये। युधिष्ठिर के मुँह से ये शब्द सुनकर देवताओं ने कहा—"तब तो चलो उनके पास! इंद्र ने हमें आदेश दिया है कि आप की इच्छा की पूर्ति करें!"

तब देवताओं ने एक दूत को बुलाकर समझाया कि युधिष्ठिर जिन-जिन व्यक्तियों को देखना चाहते हैं, उन्हें दिखावे! दूत युधिष्ठिर को साथ लेकर शेष पांडवों को दिखाने के लिए चल पड़ा।

वे जिस मार्ग से होकर जा रहे थे, उस मार्ग में पापी थे, मार्ग चलने योग्य न था। सारे मार्ग में खून और मांस छितरा पड़ा था। उन पर मक्खियाँ तथा मच्छर भिनभिना रहे थे। चारों ओर केश, हड्डियाँ, कीड़े व ज्वालाएँ भयंकर दिखाई दे रही थीं। रास्ते में खौलने वाले पानी की नदी बह रही थी।

"हमें इस प्रकार और कितनी दूर चलना है?" युधिष्ठिर ने अपने आगे चलनेवाले देवदूत से पूछा।

"लगता है कि तुम थक गये हो। चलो, लौट जायें! आगे चलने के लिए रास्ता तक नहीं है।" देवदूत ने कहा।

युधिष्ठिर निराश हो गया, साथ ही दुर्गंध के कारण उसका सिर चकराने लगा था। इतने में कुछ स्वर अत्यंत दीन स्वर में बोल उठे–"युधिष्ठिर! तुम्हारे आने से हमें थोड़ा सुख मालूम हो रहा है! तुम दो घड़ी यहीं ठहर जाओ।"

युधिष्ठिर ने उन कंठों से पूछा–"तुम सब कौन हो? यहाँ पर क्यों हो?"

"मैं कर्ण हूँ! मैं भीम हूँ! मैं अर्जुन हूँ! मैं नकुल हूँ! मैं सहदेव हूँ! मैं द्रौपदी हूँ।" यों उन कंठों ने उत्तर दिया।

यह उत्तर सुनकर युधिष्ठिर अपने मन में दुखी होने लगा–"इन पुण्यात्माओं ने कौन-सा पाप किया है? कौन-सा पुण्य करके दुर्योधन स्वर्ग के सुखों का अनुभव कर रहा है? यह सब क्या है? क्या मैं सोता हूँ? या जागता हूँ? या मैं पागल हो गया हूँ?" इसके बाद युधिष्ठिर को देवता और धर्म पर बड़ा क्रोध आया। उसने सब को खूब कोसा! तब देवदूत से बोला–"तुम जिस के दूत हो, उसके पास चले जाओ। उससे कह दो, मैं अपने भाइयों को छोड़ वहाँ पर नहीं आऊँगा। मेरे यहाँ रहने से कम से कम वे लोग थोड़े सुखी होंगे।"

देवदूत ने इंद्र के पास जाकर सारा समाचार सुनाया।

युधिष्ठिर दो घड़ियों तक वहीं रहा। इतने में इंद्र आदि देवता वहाँ पर आ पहुँचे। उनके आते ही वहाँ का अंधकार दूर हो गया। पापियों की चिल्लाहट जाती रही। साथ ही वैतरणी अदृश्य हो गई। सुखप्रद वायु बहने लगी। सर्वत्र सुगंध फैल गई। एक नया वायुमण्डल उत्पन्न हुआ।

इंद्र ने युधिष्ठिर से कहा–"युधिष्ठिर! देवता तुम्हारे व्यवहार पर प्रसन्न हुए हैं। अब हमारे साथ चलो! तुमने सिद्धि प्राप्त की है। तुम्हें तथा तुम्हारे भाइयों को उत्तम लोक प्राप्त होने जा रहे हैं। नाराज मत होओ! प्रत्येक राजा को एक बार
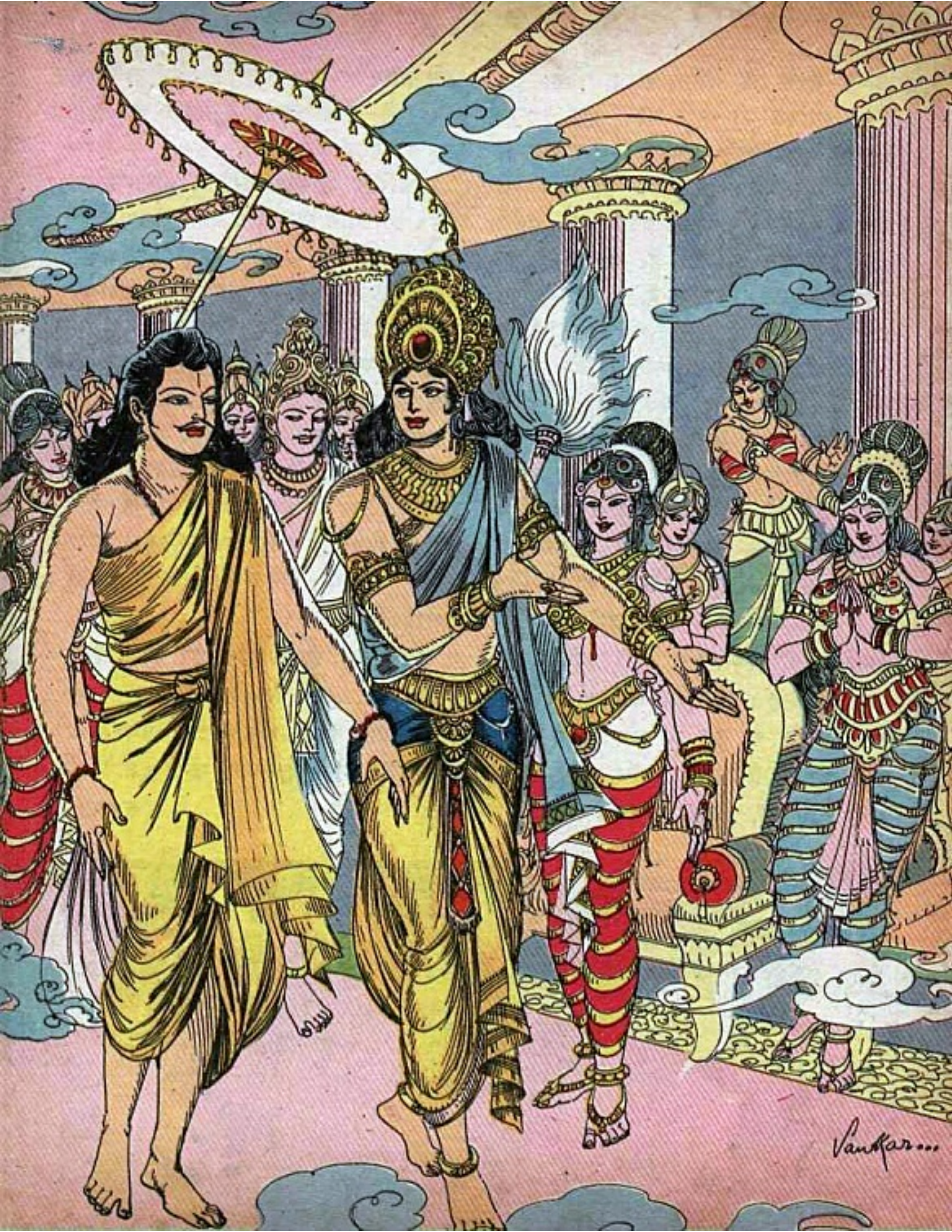
अवश्य नरक के दर्शन करने पड़ते हैं। प्रत्येक व्यक्ति जो पाप और पुण्य करता है, वह यदि पहले पुण्य का फल भोगता है तो अंत में उसे पाप का फल भी भोगना पड़ता है। इसी प्रकार जो पहले पाप का फल भोगता है, वह बाद को पुण्य का फल भोगता है। जो व्यक्ति पाप कम करता है, वह पहले नरक भोगता है। इसी लिए मैंने तुमको पहले नरक में भेजा। तुम्हारे भाई तथा द्रौपदी ने भी जो थोड़ा पाप किया था, उसका फल नरक भोग लिया है। उन्हें पाप से मुक्ति प्राप्त हो गई है। अब तुम्हारे सभी प्रिय व्यक्ति स्वर्ग में रहेंगे। तुम जाकर देख लो। तुम कर्ण के बारे में भी चिंतित हो! उसे भी स्वर्ग प्राप्त हो गया है। तुमने अन्य राजाओं से कहीं अधिक पुण्य प्राप्त किया है। हरिश्चंद्र, मांधाता, भगीरथ तथा दुष्यंत के पुत्र भगीरथ ने जो स्थान प्राप्त किया है, वही स्थान तुम्हें प्राप्त होगा। देखो, यही आकाश गंगा है। इसमें स्नान करोगे तो तुम्हारे सभी मानवीय भाव जाते रहेंगे! इसलिए पहले तुम इस गंगा में स्नान करो।"

युधिष्ठिर आकाश गंगा में अपने मानव शरीर को त्याग कर सीधे अपने भाइयों के पास चला गया। वहाँ पर उसे कृष्ण दिखाई दिये। कृष्ण अब भी पहचानने योग्य रूप में ही थे। अर्जुन कृष्ण के साथ था। युधिष्ठिर को देखते ही आदर के साथ दोनों उसके निकट आये।

एक और स्थान पर सूर्य की भाँति प्रकाशित होते कर्ण दिखाई दिया। भीम अपने पूर्व रूप में ही मरुत गणों के बीच दिखाई दिया। इसी प्रकार नकुल और सहदेव अश्वनी देवताओं के स्थान में दिखाई दिये।

इसके बाद इंद्र ने युधिष्ठिर को द्रौपदी, उसके पुत्र, धृतराष्ट्र, अभिमन्यु, राजा पांडु, कुंती, माद्री, भीष्म, द्रोण, तथा अन्य योद्धाओं को दिखाकर उनके बारे में विवरण बताये। (समाप्त)

लक्ष्मीवंतो न जानंति
प्रायेण परवेदनाम्
शेषे धराभर क्लांते
शेते नारायणः सुखम् ॥ १ ॥

[ऐश्वर्यवान साधारणतः दूसरों की व्यथाओं को नहीं जानते । पृथ्वी का भार वहन करनेवाले शेषनाग पर नारायण सुखपूर्वक शयन करते हैं ।]

प्राप्यचला नधिकारान्
शत्रुषु, मित्रेषु, बंधुवर्गेषु
नापकृतम्, नोपकृतम्, न
सत्कृतम्, किं कृतम् तेन? ॥ २ ॥

[अस्थिर अधिकार प्राप्त करके जो व्यक्ति शत्रुओं का अपकार, मित्रों का उपकार तथा बंधुजनों का सत्कार नहीं करता, वह किस काम का?]

अप्रकटीकृतशक्तिः शक्तोपि
जन स्तिर स्क्रियां लभते;
निवस न्नंतर्द्दारुणि लंघ्यो
वह्नि र्नतु ज्वलितः ॥ ३ ॥

[जो व्यक्ति अपनी शक्ति का परिचय नहीं देता वह शक्तिशाली होकर भी अपमानित होता है । वैसे ही लकड़ी के भीतर की अग्नि जब तक प्रज्वलित नहीं होती, तब तक कोई उसकी परवाह नहीं करता ।]

बड़ों के गलत रास्ते

Photo by N. S. Olaniya

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

मधुबन में खिले फूल

प्रेषिका :
सत्या कुमारी

Chandamama, October '74 Photo by P. Krishna Kumar
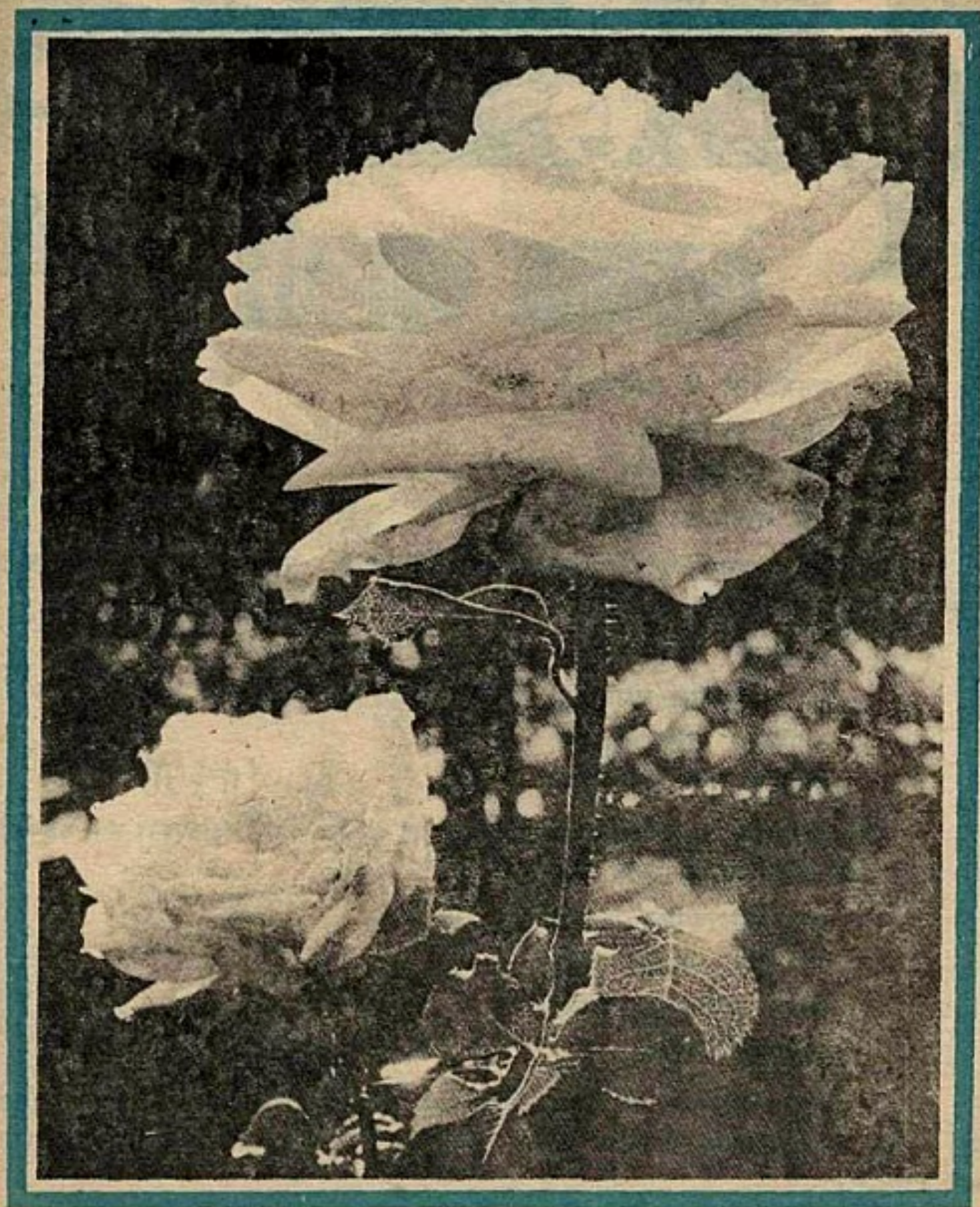
द्वारा राजेन्द्र कुमार लम्बा
प्रताप मार्केट, रुद्रपुर

जिनकी रक्षा करते शूल

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २०)

★

* परिचयोक्तियाँ अक्तूबर १० तक प्राप्त होनी चाहिए। सिर्फ़ कार्ड पर ही लिख भेजें।
* परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबंधित हों, पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ दिसम्बर के अंक में प्रकाशित की जायंगी!

चन्दामामा

इस अंक की कथा-कहानियाँ-हास्य-व्यंग्य

दूसरा आवरण पृष्ठ:
पालतू कंगारू

तीसरा आवरण पृष्ठ:
पालतू हिरण

Printed by B. V. REDDI at The Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for Chandamama Publications,

ठीक समय पर सही काम...

चन्दामामा के ग्राहकों को सूचना

यदि आप अपना पता बदल रहे हों, तो पांचवीं तारीख से पहिले ही अपनी ग्राहक-संख्या के साथ, अपना नया पता सूचित कीजिये। यदि विलम्ब किया गया, तो अगले मास तक हम नये पते पर 'चन्दामामा' न भेज सकेंगे। आपके सहयोग की आशा है।

डाल्टन एजन्सीस, मद्रास-६०० ०२६

मेरी सबसे अच्छी गुड़िया, मेरी डोनल्ड डक !
सखियों में सबसे प्यारी, मेरी, डोनल्ड डक !
खुशियों का खजाना है यह, मेरी डोनॉल्ड डक !
मम्मी मुझे ला दो अब तो, मेरी डोनॉल्ड डक !
मेरी प्यारी-प्यारी गुड़िया, मेरी डोनॉल्ड डक !
आसान और दिलचस्प तरीके से बचत करने की आदत अपने बच्चों में डालिये। चार्टर्ड बैंक की किसी भी शाखा में पधारिये और सिर्फ ५ रुपये से अपने बच्चे के लिये एक "डिजनी कैरेक्टर एकाउन्ट" खोलिये। "डिजनी कैरेक्टर एकाउन्ट" के साथ हर व्यक्ति को एक "डोनॅल्ड डक मनी बॉक्स" मुफ्त दिया जाता है जिसमें अपनी बचत को दिनोंदिन बढ़ते देख कर बच्चे फूले नहीं समाते।
SEKAI/2.
—जहाँ सेवा को महत्वपूर्ण माना जाता है
दि चार्टर्ड बैंक
अमृतसर, बम्बई, कलकत्ता, कालीकट, कोचीन, दिल्ली, कानपुर, मद्रास, नई दिल्ली, सम्भाजी (गोवा)
स्टैण्डर्ड एण्ड चार्टर्ड बैंकिंग ग्रुप का एक सदस्य
© WALT DISNEY PRODUCTIONS

NP क्राकीज चेक प्रतियोगिता

परिणाम

पुरस्कार	चेक नं.	चेक की सही राशि
I	५०८१८३	रु. १,८९७.००
II	५०८१८४	रु. १,०९५.००
III	५०८१८५	रु. ९७३.००
IV	५०८१८६	रु. ६९७.००
V	५०८१८७	रु. ४६०.००

पुरस्कार विजेताओं को बधाइयाँ :

प्रथम पुरस्कार

श्री सी. कृष्णन कुमार

द्वारा श्री के. सी. कृष्णन, वेस्ट पार्क स्ट्रीट, वेंकटापुरम, अंबत्तूर,
मद्रास - ५३

दूसरा पुरस्कार

श्री बी. बी. नरेश

२९, बेनसन रोड,
बेंगलूर - ५६००४६

तीसरा पुरस्कार (चेक की राशि बांटी गई)

१. **श्री बोड्डु सुब्बाराव**
सीनियर स्टेनोग्राफर
(कार्यालय) मण्डल इंजिनीयर (सिविल)
भारत हेवी एलेक्ट्रिकल्स लिमिटेड
हैदराबाद - ३२

२. **कुमारी डी. सुमती**
द्वारा श्री ए. आर. पांडुरंगन
नं. ३-२-२२४ खलासी गूडा
सिकंदराबाद - ३

चौथा पुरस्कार (चेक की राशी बांटी गई)

१. **मास्टर प्रवीण कुमार अग्रवाल**
३२७, इमाहीम मण्डी
कर्नाल (हरियाणा) - १३२००१

२. **कुमारी टी. विनयलक्ष्मी**
द्वारा टी. गोपीचन्द,
बी-४-३, III क्रास रोड
ऐ. ऐ. टी. मद्रास - ३६

पाँचवाँ पुरस्कार

श्री मधुसूदन बी. रायचुरा

द्वारा परिवार जनरल स्टोर्स, दुकान नं. ३-६-७५१/१
हिमायत नगर, हैदराबाद - ५०००२९

Photo by: **ANANT**

IN A PUBLIC ZOO IN INDIA

मित्र-भेद